RNI No. : UPHIN/2023/84344 ₹: 30/-

प्रेरणा विचार

मासिक
माघ-फाल्गुन, विक्रम संवत् 2081 (फरवरी -2025)
पृष्ठ-36, गौतमबुद्धनगर से प्रकाशित

144 वर्षों बाद बना ग्रहों का योग

महाकुम्भ

मंत्री मण्डल सहित पवित्र त्रिवेणी संगम में मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने लगाई आस्था की डुबकी

प्रेरणा विचार

वर्ष -3, अंक - 02

RNI No. UPHIN/2023/84344

संरक्षक
अनिल त्यागी

प्रबंध निदेशक
बिजेन्द्र कुमार गुप्ता

सलाहकार मंडल
श्याम किशोर, डॉ. अनिल निगम
अशोक सिन्हा

संपादक
डॉ. मनमोहन सिंह शिशौदिया

कार्यकारी संपादक
डॉ. प्रियंका सिंह

प्रबन्ध संपादक
मोनिका चौहान

समन्वयक संपादक
डॉ. प्रताप निर्भय सिंह

अध्यक्ष प्रीति दादू की ओर से मुद्रक/प्रकाशक डॉ. अनिल त्यागी द्वारा चंद्र प्रभु ऑफसेट प्रिंटिंग वर्क प्रा. लि. नोएडा से मुद्रित तथा प्रेरणा भवन, सी-56/20, सेक्टर-62 नोएडा, गौतमबुद्धनगर से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
प्रेरणा शोध संस्थान न्यास
प्रेरणा भवन, सी-56/20, सेक्टर-62,
नोएडा - 201309
दूरभाष : 0120 4565851
मोबाइल : 9354133708,9354133754
ईमेल : prernavichar@gmail.com
वेबसाइट : www.prernasamvad.in

इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। संपादक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का निपटारा नोएडा की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों/फोरम में मान्य होगा।

संपादक

इस अंक में

जीवनवर्धक और जीवनसंहारक शक्तियों के बीच समाया कुम्भ का रहस्य-05

कुम्भ तथा महाकुम्भ का वैज्ञानिक आधार-10

कुम्भ : संस्कारों के सागर मंथन से पुनर्जागरण -16

महाकुम्भ के अखाड़े सशक्तीकरण का केंद्र -27

सांस्कृतिक एवं आर्थिक समृद्धि देने वाला महाकुम्भ.....08

शास्त्रीय आलोक में शोध का विषय कुम्भ स्थल और कुम्भ कथा 12

प्रयागराज महाकुम्भ का अनुपम प्रबंधन.....14

महाकुम्भ और 'स्व' आधारित सांस्कृतिक अर्थ तंत्र.....18

भारतीय संचार परंपरा का उत्सव है कुम्भ.....20

सामाजिक समरसता का प्रतीक कुम्भ पर्व.....22

वो क्या जानेंगे महाकुम्भ का रहस्य.....23

दशनामी अखाड़ा परंपरा और कुम्भ मेला.....25

जब गणतंत्र दिवस की परेड में स्वयंसेवकों ने प्रतिभाग किया.....29

समर्पण और अनुशासन की भावना का संलयन : संघ 31

सांस्कृतिक विरासत के संवाहक हैं पर्व.....33

कुम्भ : जहां तिरोहित हो जाते हैं सभी भेद-भाव

जिस तरह गंगा-यमुना-सरस्वती यहां मिलकर अपना अलग-अलग अस्तित्व विलीन कर देती हैं, उसी तरह भारतीय जनमानस यहां अपनी अन्य सभी पहचानों को विसर्जित कर केवल सनातन भारतीय भाव को अंगीकार करता है। भारत के हर कोने से आए हुए श्रद्धालु पूरे देश को एक सूत्र में जोड़ने का कार्य करते हैं। भाषा, प्रांत, क्षेत्र, वर्ग आदि में विभाजित समाज में कुम्भ एकात्मता स्थापित करता है। कुम्भ में स्नान के समय ऊंच-नीच का कोई भेद नहीं दिखता और एक ही घाट पर अमीर-गरीब, विभिन्न वर्ग, मत, पंथ, सम्प्रदाय के सब लोग स्नान कर सामाजिक समरसता का संदेश देते हैं।

जैसे विश्व कल्याण के लिए आवश्यक है परम वैभवशाली राष्ट्र के रूप में भारत की पुनर्प्रतिष्ठा, ऐसे ही भारत को परम वैभवशाली बनाने के लिए आवश्यक है इसके मूल विचार सनातन धर्म की रक्षा एवं संवर्धन। वास्तव में यह सनातन संस्कृति ही भारत राष्ट्र की प्राण वायु है। प्रयागराज में गंगा-यमुना-सरस्वती का संगम स्थल आज महाकुम्भ का साक्षी बना हुआ है। 13 जनवरी से आरंभ हो 46 दिन तक चलने वाला, 4000 हेक्टेयर क्षेत्रफल में फैला, 25 सेक्टर में बंटा, 12 किलोमीटर लंबे स्नान घाट, 30 पान्टून पुल, 1.5 लाख शौचालय, 1.6 लाख टेंट, 10 हजार संस्थाओं के शिविरों के साथ यह विश्व का विशालतम धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजन है। आर्थिक दृष्टि से इस महाकुम्भ में 4-लाख करोड़ रुपये के अनुमानित कारोबार से जीडीपी में 1 प्रतिशत की वृद्धि की संभावना है। महाकुम्भ मेले में आए श्रद्धालुओं की गिनती पहली बार आर्टिफिशियल इन्टेलिजेन्स के माध्यम से की जा रही है और इस माध्यम से होने वाली यह दुनिया की सबसे बड़ी गिनती होगी। महाकुम्भ 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का साकार प्रकटीकरण है जहां देशी एवं विदेशी श्रद्धालुओं तथा पर्यटकों का तांता लगा हुआ है। इसमें होने वाले मंथन से उत्पन्न अमृत भारतीय समाज को दिशा भी देता है और सनातन के प्रति विश्वास को भी सुदृढ़ करता है। जिस तरह गंगा-यमुना-सरस्वती यहां मिलकर अपना अलग-अलग अस्तित्व विलीन कर देती हैं, उसी तरह भारतीय जनमानस यहां अपनी अन्य सभी पहचानों को विसर्जित कर केवल सनातन भारतीय भाव को अंगीकार करता है। भारत के हर कोने से आए हुए श्रद्धालु पूरे देश को एक सूत्र में जोड़ने का कार्य करते हैं। भाषा, प्रांत, क्षेत्र, वर्ग आदि में विभाजित समाज में कुम्भ एकात्मता स्थापित करता है। कुम्भ में स्नान के समय ऊंच-नीच का कोई भेद नहीं दिखता और एक ही घाट पर अमीर-गरीब, विभिन्न वर्ग, मत, पंथ, सम्प्रदाय के सब लोग स्नान कर सामाजिक समरसता का संदेश देते हैं। संभवत : सम्पूर्ण विश्व में कुम्भ ही एकमात्र ऐसा पर्व है जो राष्ट्रों की भौगोलिक सीमाओं का भी अतिक्रमण कर सांस्कृतिक भिन्नता, क्षेत्र, मत-पंथ, भाषा-भूषा और नस्लवाद में बिखरी मनुष्यता को आत्मसात कर लेता है। भारत के इसी एकात्म भाव को स्वीकार करने से वैश्विक कल्याण का मार्ग प्रशस्त होगा। सनातन भारतीय संस्कृति में निहित आध्यात्मिक एकात्म भाव से परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाली सांस्कृतिक विविधता को भी प्रेम और उल्लास के साथ धारण किया जा सकता है यही कुम्भ संस्कृति का सम्पूर्ण विश्व को सन्देश है।

महाकुम्भ में कुशल प्रबंधन, मीडिया की भूमिका, व सामाजिक प्रभावों का अध्ययन भारतीय प्रबंधन संस्थान (आईआईएम) तथा अन्य विश्व स्तरीय संस्थान कर रहे हैं। ये शोधकर्ता पर्यटन, उद्योग, मीडिया की भूमिका, सोशल मीडिया प्रबंधन, रणनीतिक प्रबंधन और नियोजन का अध्ययन कर रहे हैं। आईआईएम अहमदाबाद विशेष रूप से कुम्भ के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक प्रभावों का अध्ययन कर रहा है। प्रयागराज महाकुम्भ में आए अधिकतर श्रद्धालु एवं पर्यटक कुम्भ में आस्था की डुबकी के बाद रामनगरी श्री अयोध्या धाम में रामलला के दर्शन तथा शिवनगरी वाराणसी में श्री काशी विश्वनाथ के दर्शन भी कर रहे हैं।

आशा है प्रेरणा विचार पत्रिका का महाकुम्भ पर केंद्रित यह अंक सुधि पाठकों की अपेक्षाओं पर खरा उतरेगा।

राजेन्द्र सिंह
जल पुरुष

जीवनवर्धक और जीवनसंहारक शक्तियों के बीच समाया कुम्भ का रहस्य

भारतीय जनमानस में सदियों से अनवरत रचा-बसा कुम्भ क्या नदी में एक डुबकी स्नान कर लेने की मात्र आस्था का आयोजन है अथवा इसकी पृष्ठभूमि में कुछ और भी रहा है? कुम्भ, अर्धकुम्भ और महाकुम्भ की नामावली व समयबद्धता का आधार क्या रहा होगा? यदि कुम्भ का प्रयोजन स्नान मात्र ही हो, तो फिर कल्पवासी यहां महीनों कल्पवास क्यों करते हैं? स्नान का इतना बड़ा आयोजन क्यों?

भारत में कुम्भ का एक गौरवशाली इतिहास रहा है। छह बरस में अर्धकुम्भ, 12 बरस में कुम्भ और 144 बरस में महाकुम्भ। जाति, धर्म, अमीरी-गरीबी यहां तक कि राष्ट्र की सीमाएं भी इस सनातन पर्व पर परस्पर विसर्जित हो जाती हैं। साधु-संत-राज-समाज-देशी-विदेशी सभी इस आयोजन में एकरस हो आनंद में डूब जाते हैं। कुम्भ में आकर ऐसा लगता है कि जैसे हम कभी भिन्न थे ही नहीं। दुनिया में पानी का इतना बड़ा मेला मैंने कहीं नहीं देखा। यह क्रम हजारों बरस से निरंतर जारी है। यह बात हैरान भी करती है और मन में कई जिज्ञासाएं भी उठाती है।

मन जानना चाहता है कि भारतीय जनमानस में सदियों से अनवरत रचा-बसा कुम्भ क्या नदी में एक डुबकी स्नान कर लेने की मात्र आस्था का आयोजन है अथवा इसकी पृष्ठभूमि में कुछ और भी रहा है? कुम्भ, अर्धकुम्भ और महाकुम्भ की नामावली व समयबद्धता का आधार क्या रहा होगा? यदि कुम्भ का प्रयोजन स्नान मात्र ही हो, तो फिर कल्पवासी यहां महीनों कल्पवास क्यों करते हैं? स्नान का इतना बड़ा आयोजन क्यों?

लोक आस्था देवताओं और दानवों के बीच समुद्र मंथन से उत्पन्न अमृत कलश के इर्द गिर्द घूमती है। जो बारह वर्षों में सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति के योगा-योग के चार प्रभाव बिन्दुओं को कुम्भ का स्थान मानती है।

कुम्भ का विज्ञान : विश्व को ब्रह्माण्ड रूप कुम्भ ही कहा गया है। वैज्ञानिक इसी से दिन, रात, महीना और वर्ष की गणना करते हैं। पृथ्वी एक दिन में एक बार अपनी धुरी पर और बारह महीनों में एक बार सूर्य की परिक्रमा पूरा करती है। भारत के ऋषि वैज्ञानिक तर्क देते हैं कि ब्रह्माण्ड में ऑक्सीजन प्रधान जीवनवर्धक और कार्बन-डाइ-आक्साइड प्रधान जीवन संहारक दोनों प्रकार के पिंड हैं। बृहस्पति ग्रह जीवनवर्धक पिंडों और तत्वों का तो शनि ग्रह जीवनसंहारक तत्वों का केन्द्र है। सूर्य का द्वादशांश छोड़ दें, तो शेष भाग जीवनवर्धक है। सूर्य पर दिखता काला धब्बा... ही वह हिस्सा है, जिसे जीवनसंहारक कहा जाता है। अमावस्या के निकट काल में, जब चन्द्रमा क्षीण हो जाता है, तब संहारक प्रभाव डालता है। शेष दिनों में खासकर शुक्ल पक्ष में चंद्रमा जीवनवर्धक होता है। शुक्र सौम्य होने के बावजूद संहारक है। अतैव इसे आसुरी शक्ति का पुरोधा कहा जाता है। मंगल रक्त और बुद्धि दोनों पर प्रभाव डालता है। बुध उभय पिंड है, जिस ग्रह का प्रभाव अधिक होता है, बुध उसके अनुकूल ही प्रभाव डालता है। छाया ग्रह राहु-केतु तो सदैव ही जीवन संहारक

यानी कार्बन-डाइ-ऑक्साइड से भरे पिंड हैं। इनसे जीवन की अपेक्षा करना बेकार है। अलग-अलग ग्रह अलग-अलग राशियों के स्वामी हैं। इसलिए जीवनवर्धक ग्रहों का प्रधान बृहस्पति जब-जब संहारक ग्रह की राशि में प्रवेश कर जीवनसंहारक तत्वों में रुकावट पैदा करता है; ऐसे संयोग शुभ तिथियां मानी गईं। ऐसे चक्र में एक समय ऐसा आता है जब ऑक्सीजन प्रधान पिंड बृहस्पति जीवन संहारक प्रधान ग्रह शनि की खास राशि कुम्भ में प्रवेश करता है तथा सूर्य और चन्द्रमा मंगल की राशि मेष में आ जाते हैं। तब इनके प्रभाव का केन्द्र-बिन्दु हरिद्वार बनता है। यह समय हरिद्वार में कुम्भ पर्व का समय माना जाता है। इसी प्रकार जब बृहस्पति ग्रह दैत्यगुरु शुक्र की राशि वृष में प्रवेश करता है तथा सूर्य और चन्द्रमा का शनि की मकर राशि में प्रवेश होता है, तब प्रयागराज प्रभाव बिन्दु बनता है और कुम्भ प्रयाग में होता है। याद रहे कि यही वह तिथि होती है, जब सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायण होता है। सूर्य का उत्तरायण होना कर्मकाण्ड की दृष्टि से शुभ माना जाता है। जब भादो की भयानक धूप होती है, तब सूर्य के मारक प्रभाव से बचाने के लिए बृहस्पति सूर्य की राशि सिंह में प्रवेश करता है। इस समय जब तक सूर्य चन्द्र सहित सिंह राशि पर बना रहता है, तब तक नासिक इसका केन्द्र बिन्दु होता है और वहां गोदावरी तीरे कुम्भ पर्व मनाया जाता है। जब बृहस्पति सिंहस्थ हो, सूर्य मंगल की मेष राशि में हो और चन्द्रमा शुक्र की राशि तुला में पहुंचे जाये, तो महाकाल का पवित्र क्षेत्र उज्जैन प्रभाव बिन्दु बनता है और शिप्रा किनारे कुम्भ का मेला लगता है।

कुम्भ का सिद्धान्त : मेरा मन आस्था और विज्ञान के इस उत्तर से संतुष्ट नहीं हुआ। मैंने धर्माचार्यों से चर्चा की। कल्पवासियों के बीच बैठा। अनुभवों को टटोला, तब एक बात समझ में आई कि भारत में लम्बे समय से समाज को अनुशासित करने के लिए बनाई गई वैज्ञानिक रीति-नीति को धर्म, पाप-पुण्य और मर्यादा जैसी आस्थाओं से जोड़ा जाता रहा है। समाज को विज्ञान की जटिलताओं में उलझाने की बजाए आस्था की सहज, सरल और छोटी पगडंडी का मार्ग अपनाया गया। इसलिए पुराण की मानें तो भी और विज्ञान की मानें तो भी, जब-जब देवताओं अर्थात् जीवनवर्धक रचनात्मक शक्तियों द्वारा आसुरी शक्तियों अर्थात् जीवनसंहारक नकारात्मक तत्वों के दुष्प्रभाव को रोकने की कोशिश की गई, तब-तब का समय/प्रयास कुम्भ नाम से विख्यात हुआ। सम्भव है कि ऐसे शुभ कर्मों को निरंतरता देने के लिए समाज के नियन्ताओं ने इसे नियमित कर्म का रूप दे दिया और जो-जो स्थान इन कोशिशों का केन्द्र-बिन्दु बने, वे कुम्भ पर्व का स्थान हो गए ।

कुम्भ का व्यवहार :- अनुभव बताता है कि जब समृद्धि आती है, तो वह सदुपयोग का अनुशासन तोड़कर उपभोग का लालच भी लाती है और वैमनस्य भी। ऐसे में भविष्य का पूर्वाभास व कुछ सावधान मन ही रास्ता दिखाते हैं। ऐसे में जीवनवर्धक शक्तियों को जागृत होना पड़ता है। वे आपस में एकजुट होकर विचार-विमर्श करती हैं और समाधान खोजती हैं। अच्छे कामों को आगे बढ़ाती हैं।

सावन, भाद्रपद के महीनों में भूमि को गर्भवती माना जाता है। इन महीनों में जुताई और खुदाई प्रतिबन्धित रहती है। नदी माँ है, इसलिए इसमें मलमूत्र व गंदगी का त्याग वर्जित है। ये पूजनीय हैं। नदी को पूजनीय मानने वाला समाज भला माँ के वक्षस्थल पर हल चलाने की इजाजत कैसे दे सकता था? फिर क्या? नदी पाट पर खेती को लेकर विवाद बढ़ा। समाज ने ऋषियों को नदियों की पवित्रता और सुरक्षा की पहरेदारी सौंपी थी। समाज प्रकृति के प्रतिनिधि माने गये ऋषियों के पास गया। ऋषियों ने कहा कि नदी अकेले न समाज की है, न ऋषियों की। यह तो सभी की साझा है। राज, समाज, ऋषि और प्रकृति के जीव व वनस्पति, सभी का इस पर साझा अधिकार है। अतः इसकी समृद्धि और पवित्रता कायम रखने के लिए सभी को बैठकर निर्णय करना होगा। बस, एक दस्तूर बन गया और राज-समाज और ऋषि-संत सभी निश्चित अवधि व अंतराल पर नदी किनारे जुटने लगे। आज भी समाज किसी न किसी नाम से साल में कई बार अपनी-अपनी नदियों के किनारे जुटता ही है। कहीं इसका कारण छठ पूजा है, तो कहीं वसंत पंचमी, पोंगल और कहीं माघ तथा श्रावणी मेला। ऐसा माना जाता है कि कोई भी नदी करीब 150 बरस में अपनी धारा की दिशा और दशा में बदलाव करती है। सम्भवतः इसीलिए 144 बरस में महाकुम्भ का निर्णायक आयोजन तय किया गया। महाकुम्भ के निर्णयों की अनुपालना और निगरानी के लिए हर छह बरस पर अर्धकुम्भ और बारह बरस पर कुम्भ के आयोजन की परम्परा बनी।

अथर्ववेद में विश्व को ही घट के रूप में कल्पित किया गया है। समाज में सदैव आसुरी और दैव ये दो तरह की शक्तियां रही ही हैं। आस्था और विज्ञान दोनों का आकलन करें, तो कौन इन्कार करेगा कि अच्छी ताकतों द्वारा बुरी ताकतों को रोकने की कोशिश और इसके लिए एकजुट होने की परिपाटी ही कुम्भ है। मैं कुम्भ को इसी रूप में देखता हूं।

कुम्भ के वाहक : यह सच है कि भारत में जब जहां संकट दिखा कोई महापुरुष, घटना या संदर्भ प्रेरक बनकर खड़ा हो गया। इतिहास के पन्नों पर निगाह डालें तो राजा, प्रजा और ऋषि तीनों कहीं न कहीं अपने-अपने वर्ग के समक्ष प्रेरणा बनकर खड़े दिखाई देते हैं। जो कुम्भ का अभिप्राय कभी न भूले, जिन्होंने कुम्भ के विमर्श को कभी नहीं नकारा, कुम्भ के वाहक बने। जो राज, समाज और ऋषि अपनी भूमिका को कभी न भूले, समाज ने उन्हें हमेशा याद रखा। बरस-दो बरस नहीं, हजारों बरस बाद भी। जब उत्तर के मैदान में पानी का संकट था, तब राजा भागीरथ प्रतीक बने। मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और कर्नाटक के वर्तमान नामकरण वाले इलाकों में जब जल संकट हुआ तो ब्राह्मण गौतम ने गोदावरी को प्रगट किया। ब्रह्मपुराण में इस

प्रसंग का जिक्र करते हुए गोदावरी को गंगा का ही दूसरा स्वरूप कहा गया है। विन्ध्यगिरि पर्वतमाला के उत्तर में बहने वाली गंगा भागीरथी कहलाई और दक्षिण की ओर बहने वाली गंगा गोदावरी नाम से विख्यात हुई। इसे गौतमी गंगा भी कहा जाता है। स्कन्दपुराण में वर्तमान आन्ध्र-प्रदेश कभी नदी-विहीन क्षेत्र के रूप उल्लिखित है। दक्षिण के इस संकट में एक ऋषि का पौरुष प्रतीक बना। ऋषि अगस्त्य के प्रयास से ही आकाशगंगा दक्षिण की धरा पर अवतरित होकर सुवर्णमुखी नदी के नाम से एक जीवनदायी धारा बन गई। भागीरथ एक राजा, गौतम एक प्रजा और अगस्त्य एक ऋषि, तीनों ही नदी के अविरल प्रवाह के उत्तरदायी, तीनों ही रचनात्मकता के प्रतीक। सचमुच! कभी भारत में नदियों की समृद्धि में सभी साझेदार थे। हर भारतवासी के लिए उसकी अपने क्षेत्र की नदी गंगा जैसी ही पवित्र थी।

कुम्भ का वर्तमान : हम भूल गए अभिप्राय! कुम्भ की गौरवशाली परम्परा नदियों के प्रति हमारी आस्था का प्रतीक है और यह हमें याद दिलाता है कि हमें इसकी पवित्रता और अविरलता को बनाए रखना है। पर अफसोस। आज कुम्भ की नदियां न आचमन के योग्य हैं और न ही इन्हें पवित्रता की देवी कहा जा सकता है। गंगा, गोदावरी, शिप्रा? सभी प्रदूषण, शोषण और अतिक्रमण से त्रस्त हैं। आस्था से बंधे स्नानार्थी कुम्भ में इकट्ठे होते हैं, नदी के मलिन जल में स्नान और आचमन की औपचारिकता पूरी करते हैं। राज-प्रशासन व्यवस्था देता है और संत भी अमृत स्नान के नाम पर पहली डुबकी लगाकर इतिश्री कर लेते हैं। क्या किसी के मन में एक बार भी यह विचार नहीं आता कि हम जिसे माँ कहते हैं, जो कभी श्वेत, शुभ्र, धवल और अमृतमयी थी उसे हमने मैली, बीमार, शोषित व कचरा बना दिया है? नदियों की ऐसी दुर्दशा वाले भारत में, ऐसी सामाजिक व धार्मिक आस्था के कोई मायने नहीं है कि जो नदियों का जीवन न बचा सके।

कुम्भ का निवेदन, वापस लौटे समाज : जरूरत है कि हम अपनी स्थानीय नदी को गंगा ही मानकर संरक्षण व उन्नयन में लगें। हमें कुम्भ के मूल अभिप्राय व लक्ष्य को

नदियों पर प्रदूषण का बड़ा खतरा तो लम्बे अरसे से था ही, अब अतिक्रमण और शोषण की बुरी नीयत भी सामने आ गई है। यही आज की नकारात्मक शक्तियां हैं। निजी हित प्रमुख हो गया है, सामुदायिक व सर्वकल्याणकारी कुछ नहीं। ऐसी स्थिति में किसी एक को दोष देने या हाथ पर हाथ धरकर चुप बैठने से काम चलने वाला नहीं। यदि अब भी हम नहीं चेते, तो नदियां तो जाएंगी ही, हम भी जाएंगे और भारत की समृद्धि व गौरव भी।

पुनः प्राप्त करना होगा। हमें अपने राज, समाज और संत सभी को याद दिलाना होगा कि अब जब भी नदी किनारे समाज जुटे, वहां अपनी आस्था के दीप तो जलाएं लेकिन नदी के प्रवाह की अविरलता, स्वच्छता और सुंदर स्वरूप को सुनिश्चित करने का संकल्प लेना भी न भूलें। अब छठ पूजा, माघ-श्रावणी मेला, कुम्भ और कावड़ियों की कलश यात्राएं नदियों के संरक्षण और समृद्धि के लिए सुनिश्चित कदम उठाने का माध्यम बनें। भारत में जल के विकेन्द्रीकृत जल प्रबन्धन का जो समयसिद्ध ज्ञान है, वह इसी रास्ते समृद्ध होकर पुनः समाधान सुझा सकता है। वैश्विक समस्याओं के स्थानीय समाधान प्रस्तुत करने का यही एक रास्ता है। जो जहां है वहां की समझ, शक्ति और संगठन को नदी किनारे के इन कुंभों से जोड़कर एक ताकत खड़ी करे ताकि पूर्व की तरह कुम्भ के निर्णय सर्वमान्य बनें। फिर उन निर्णयों की अनुपालना व निगरानी की सतत् व्यवस्था बनानी होगी। राज, समाज और संत सभी जिम्मेदार बनें।

यह हो कैसे ? : इस सवाल के साथ ही अलवर की पुनर्जीवित नदी अरवरी और 70 गांवों का संगठन-अरवरी संसद मेरे सामने आ खड़े होते हैं। अरवरी नदी भी कभी सूख गई थी... आज सदानीरा है। जब अरवरी समृद्ध और सदानीरा हुई, तो यहां भी लालच आया। राज में भी और समाज में भी। राज ने मछली का टेंडर खोल दिया और समाज अधिक पानी की फसल पाने को लालायित हो उठा। इसी समाज में कुछ समझदार लोग थे, जिन्होंने भविष्य देख लिया था। वे चेत गए। अरवरी के सत्तर गांव एक साथ बैठे। नदी सदा ही सदानीरा और समृद्ध बनी रहे, इसके लिए उसके जल के उपयोग का अनुशासन बनाया। नियम बने और उनकी पालना भी सुनिश्चित हुई। राज के लालच पर भी रोक लगी। ठेका रद्द हो गया। आज भी अरवरी के 70 गांव साल में दो बार अपनी नदी के किनारे एक साथ बैठते हैं। नदी और इसके आस-पास की हरियाली, जीव व प्रकृति की समीक्षा करते हैं और फिर से अपने काम में जुट जाते हैं, यह भाव लिए कि नदी, जंगल, पहाड़, पानी समृद्ध रहेंगे तो उनकी समृद्धि में भी कोई कमी नहीं आएगी। अरवरी आज उनका तीर्थ है और अरवरी संसद की हर बैठक एक कुम्भ। अरवरी के 70 गांव मुझे ताकत देते हैं, पर भारत में हर जगह का समाज ऐसा ही हो जाए, यह उम्मीद करना बेमानी है। हां! इस बात पर मुझे सदैव यकीन रहा है कि कोशिश और नीयत अच्छी हो, तो नतीजा आता ही है। क्योंकि हर जगह राज, समाज और संत सभी के बीच कुछ अच्छे लोग मिल ही जाते हैं। प्रकृति भी आपकी मदद करती है। मन ने कहा कि इन अच्छी ताकतों को एकजुट कर लिया जाए, तो रास्ता निकलेगा ही। नदी संरक्षण के लिए एक साथ मिल बैठने के ऐसे आयोजन को स्थानीय 'जल कुम्भ' का नाम दिया गया।

इस प्रकार कुम्भ मात्र एक धार्मिक पर्व या आध्यात्मिक संगम नहीं है, यह जीवन की पूर्णता का, इसके सभी क्षेत्रों में शुचिता का प्रतीक है। यह प्रकृति और इसके सभी घटकों के प्रति हमारी निष्ठा की अभिव्यक्ति है। सबसे बढ़कर यह हमारे मनुष्य होने के उत्तरदायित्व को समझने का, उसे अपने जीवन में धारण करने का संकल्प है....यह कुम्भ है।

प्रो. भगवती प्रकाश शर्मा
पूर्व कुलपति, गौतमबुद्ध विवि., ग्रेटर नोएडा

सांस्कृतिक एवं आर्थिक समृद्धि देने वाला महाकुम्भ

मेले में बिना भेदभाव के सभी मत-पंथ, सम्प्रदाय व जाति-वर्ग के धनी-निर्धन, आबाल-वृद्ध व स्त्री-पुरुष सहित सभी श्रद्धालु पूर्ण समरसता के साथ स्नान-ध्यान, भोजन-प्रसाद, सत्संग-कीर्तन, स्वाध्याय-दर्शन का पूरा लाभ उठाते हैं। प्रत्येक कुम्भ के कई माह पहले से साधु-सन्त व गृहस्थ श्रद्धालु अत्यंत श्रद्धापूर्वक आते हैं।

गंगा, यमुना व अदृश्य सरस्वती के संगम पर होने वाला महाकुम्भ पर्व विश्व का विशालतम आध्यात्मिक व सांस्कृतिक समागम है। मेले के पहले दिन 13 जनवरी को ही देश-विदेश के 2.5 करोड़ से अधिक व प्रथम छः दिन में 7 करोड़ से अधिक श्रद्धालुओं ने संगम में पावन स्नान किया है। सहस्त्राब्दियों से अनवरत चली आ रही महाकुम्भ की यह एक अत्यंत अलौकिक आध्यात्मिक परम्परा है, जिसके सांस्कृतिक व सामाजिक आयामों के साथ आर्थिक आयाम भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस बार महाकुम्भ में हर श्रद्धालु को बेहतर अनुभव देने के लिए अत्याधुनिक तकनीकी युक्त व्यवस्थाओं का प्रयोग किया गया है। देश के प्रत्येक जिले, खण्ड, गांव के श्रद्धालुओं का मेले में समागम, सत्संग, प्रवचन व कीर्तन का अनवरत दौर देखा जा सकता है।

पौष मास की पूर्णिमा सोमवार 13 जनवरी से महाशिवरात्रि 26, फरवरी तक चलने वाले इस मेले के मध्य 6 विशेष स्नान की तिथियां हैं। इस अवधि में 45 करोड़ से अधिक श्रद्धालु कुम्भ स्नान करेंगे। इसमें मुख्य अमृत स्नान मौनी अमावस्या को 29 जनवरी 2025 को होगा। इससे एक दिन पहले व एक दिन बाद तक सर्वाधिक श्रद्धालुओं के पहुंचने की सम्भावना है। श्रद्धालुओं की यह संख्या विश्व के 41 देशों की जनसंख्या से अधिक होगी। मेले में प्रमुख स्नान हैं - 13 जनवरी - पौष पूर्णिमा (कल्पवास प्रारंभ), 14 जनवरी - मकर संक्रांति, 29 जनवरी - मौनी अमावस्या, 3 फरवरी - बसंत पंचमी, 12 फरवरी-माघी पूर्णिमा (कल्पवास का समापन), 26 फरवरी-महाशिवरात्रि (महाकुम्भ समापन)

पौराणिक विवरणों के अनुसार देवासुर संघर्ष और सागर मंथन से जुडी है कुम्भ पर्व की कथा।12 पूर्ण कुम्भ होने के बाद 144 वर्ष बाद प्रयाग में महाकुम्भ आयोजित होता है। इस प्रकार हर परिवार की तीसरी पीढ़ी को महाकुम्भ देखने का अवसर मिलता है।

पौराणिक विवेचनाओं के अनुसार कुम्भ का आयोजन बारी-बारी से विविध ग्रह स्थितियों में हरिद्वार, प्रयागराज, नासिक और उज्जैन चार स्थानों पर होता है।

मेले में 45 करोड़ से ज्यादा श्रद्धालुओं के आने की अपेक्षा होने से विश्व जनसंख्या की 5 प्रतिशत संख्या महाकुम्भ की साक्षी बनेगी। इस अवधि में 12 लाख श्रद्धालु कल्पवास करेंगे।

राष्ट्रों की जनसंख्या की दृष्टि से कुम्भ विश्व का तीसरे बड़े देश जैसा होगा। यह संख्या पाकिस्तान की जनसंख्या से करीब दो गुना और अमरीका की जनसंख्या से करीब 6 करोड़ ज्यादा होगी। महाकुम्भ पर राम मंदिर से साढ़े तीन गुना और नए संसद भवन से 5 गुना खर्च होगा। इस भव्य आयोजन पर सरकार लगभग 7000 करोड़ रूपये व्यय कर रही है। यह श्री अयोध्या धाम में बने राम मंदिर के निर्माण से करीब साढ़े तीन गुणा अधिक है। महाकुम्भ का खर्च स्टैच्यू ऑफ यूनिटी के निर्माण (2989 करोड़ रूपये) से दो गुना है। कुम्भ मेले से देश और प्रदेश की अर्थव्यवस्था में 2 लाख करोड़ रुपए का योगदान मिलने की संभावना है।

पौराणिक वचन है कि - ''अश्वमेध सहस्राणि वाजपेय शतानि च। लक्षप्रदक्षिणा भूमेः

कुम्भस्नानेन् तत् फलम् ।।

अर्थात् एक हजार अश्वमेध यज्ञ, सौ वाजपेय यज्ञ, एक लाख बार भूमि की परिक्रमा करने से जो पुण्य-फल प्राप्त होता है, वह एक बार ही कुम्भ स्नान से प्राप्त होता है।

महाकुम्भ के दौरान कई श्रद्धालु कल्पवास का पालन करते हैं। निष्ठापूर्वक कल्पवास करने वालों को भगवान विष्णु की कृपा प्राप्त होती है। कल्पवास का नियम वैसे तो कभी भी अपनाया जा सकता है। महाकुम्भ के लिए इस साल कल्पवास के नियमों का पालन सूर्य देव जब धनु राशि से निकलकर मकर राशि की यात्रा आरंभ करते हैं जब एक माह के कल्पवास का ठीक वैसा ही पुण्य फल मिलता है, जो कल्प में ब्रह्म देव के एक दिन के समान होता है। इसलिए कई लोग मकर संक्रांति के दिन से भी कल्पवास की शुरुआत करते हैं। कल्पवास के निम्न 21 नियम हैं –

सत्यवचन, अहिंसा, इंद्रियों पर नियंत्रण, प्राणियों पर दया, ब्रह्मचर्य का पूर्ण पालन, व्यसनों से दूर रहना, ब्रह्म मुहूर्त में जागना, नियमित तीन बार पवित्र नदी में स्नान करना, त्रिकाल संध्या का ध्यान करना, पितरों के लिए तर्पण व पिंडदान, दान, अंतर्मुखी जप, सत्संग, संकल्पित क्षेत्र से बाहर न जाना, किसी की भी निंदा न करना, साधु-संन्यासियों की सेवा, जप और कीर्तन, एक समय भोजन ग्रहण करना, भूमि पर सोना, अग्नि सेवन न करना, देव पूजन करना। कल्पवास के इन 21 नियमों में ब्रह्मचर्य, व्रत, उपवास, देव पूजन, सत्संग और दान को सबसे अधिक महत्वपूर्ण बताया गया है। कल्पवास का अनन्त पुण्य है। जो व्यक्ति श्रद्धा और निष्ठापूर्वक कल्पवास के नियमों का पालन करता है, उसे इच्छित फल की प्राप्ति होने के साथ ही जन्म-जन्मांतर के बंधनों से मुक्ति मिल जाती है। महाभारत के अनुसार माघ महीने में किया गया कल्पवास उतना ही पुण्य देता है, जितना 100 वर्षों तक बिना अन्न ग्रहण किए तपस्या करना।

महाकुम्भ 12 कुम्भ की आवृत्ति के बाद 144 वर्ष में एक बार आता है। आज से 143 वर्ष पहले महाकुम्भ का बजट लगभग 20 हजार रुपये था। जबकि वर्तमान प्रयागराज महाकुम्भ

एक हजार अश्वमेघ यज्ञ, सौ वाजपेय यज्ञ, एक लाख बार भूमि की परिक्रमा करने से जो पुण्य-फल प्राप्त होता है, वह एक बार ही कुम्भ स्नान से प्राप्त होता है।

का बजट 7000 करोड़ है। 143 वर्ष पूर्व के महाकुम्भ में 8 लाख लोग संगम में स्नान करने पहुंचे थे, जबकि देश की कुल जनसंख्या 22.5 करोड़ थी। यातायात के साधनों का तब बहुत अभाव था। उस समय की सजावट व कुम्भ आयोजन बजट की दृष्टि से अत्यंत सादगी भरा था। 1894 तक देश की जनसंख्या बढ़कर 23 करोड़ हो गई और कुम्भ में स्नान करने वालों की संख्या 10 लाख तक पहुंच गई। उस वर्ष आयोजन पर 69,427 रुपये व्यय हुए, आज की मुद्रास्फीति दर से उसका वर्तमान मूल्य लगभग 10.5 करोड़ रुपये होते हैं। 1906 के कुम्भ में श्रद्धालुओं की संख्या बढ़कर 25 लाख हो गई थी और 90,000 रुपये व्यय किए गए थे। 1918 में कुम्भ में 30 लाख श्रद्धालु पहुंचे और आयोजन का बजट 1.37 लाख रुपये गया था। यह व्यय आज की दर से करीब 16.44 करोड़ रुपये होता है।

वर्ष 2019 के महाकुम्भ को भी अब तक का सबसे बड़ा और व्यवस्थित कुम्भ माना गया था। जिसमें करोड़ों श्रद्धालुओं ने संगम में पवित्र डुबकी लगाई।

इस मेले में बिना भेदभाव के सभी मत-पंथ, सम्प्रदाय व जाति-वर्ग के धनी-निर्धन, आबाल-वृद्ध व स्त्री-पुरूष सहित सभी श्रद्धालु पूर्ण समरसता के साथ स्नान-ध्यान, भोजन-प्रसाद, सत्संग-कीर्तन, स्वाध्याय-दर्शन का पूरा लाभ उठाते हैं। प्रत्येक कुम्भ के कई माह पहले से साधु-सन्त व गृहस्थ श्रद्धालु अत्यंत श्रद्धापूर्वक आते हैं। देश-विदेश से हिन्दू श्रद्धालुओं के अतिरिक्त अन्य पंथों के श्रद्धालु भी संगम में स्नानार्थ आते हैं।

कुम्भ मेले में हिन्दू धर्म के सभी मत, पंथ व सम्प्रदायों के सभी संन्यासी सम्मिलित होते हैं। जिनमें साधु और नागा साधु भी होते हैं, जो वर्ष भर कठोर साधना करते हैं और आध्यात्मिक अनुशासन के साथ कठोर तप के मार्ग का अनुसरण करते हैं।

कुम्भ मेले के दौरान अनेक समारोह आयोजित होते हैं। हाथी, घोड़े और रथों पर अखाड़ों की पारंपरिक शोभायात्रा निकलती है। अमृत स्नान के पूर्व विशेष शोभा यात्रा निकलती है। इसमें अखाड़ा प्रदर्शन, चमचमाती तलवारें और नागा साधुओं की रस्में, तथा अनेक अन्य सांस्कृतिक गतिविधियां संचालित होती हैं, जो करोड़ों तीर्थयात्रियों को कुम्भ मेले में आकर्षित करती हैं।

महाकुम्भ 2025 में इस बार भारी वैश्विक आकर्षण भी देखा जा रहा है। संगम में डुबकी लगाने के लिए पहले ही दिन से विश्व भर के अनेक देशों से श्रद्धालु महाकुम्भ में पहुंच रहे हैं। महाकुम्भ एक वैश्विक उत्सव बन गया है। इस्लामिक देशों में भी महाकुम्भ को लेकर खूब उत्सुकता है। विश्व भर के देश महाकुम्भ के बारे में गूगल पर सर्च कर रहे हैं।

इस बार महाकुम्भ में एप्पल कम्पनी के सहसंस्थापक स्व. स्टीव जॉब्स की पत्नी लारीन पॉवेल जॉब्स ने भी भाग लिया है। निरंजनी अखाड़ा के आचार्य महामण्डलेश्वर कैलाशानन्द गिरी जी की शिष्या बनी लारीन पॉवेल को आध्यात्मिक नाम कमला प्रदान किया गया है।

प्रयागराज में तीनों नदियों के संगम को अत्यंत पवित्र माना गया है। इस संगम में महाकुम्भ पर्व में स्नान कर डुबकी लगाने से न केवल पापों का नाश होता है, वरन् आध्यात्मिक चेतना के विकास का मार्ग प्रशस्त होता है। महाकुम्भ से लौटते समय लोग संगम का जल, मिट्टी, तुलसी एवं देवताओं व सन्तों का आशीर्वाद भी लाते हैं। इस प्रकार श्रद्धालु केवल भौतिक पूजा सामग्री ही नहीं वरन् आध्यात्मिक अनुभव के साथ ही सुख-समृद्धि, सौहार्द और समरसतामूलक सन्देश भी साथ लेकर लौटते हैं।

कुम्भ तथा महाकुम्भ का वैज्ञानिक आधार

प्रो. बलवंत सिंह राजपूत
पूर्व कुलपति, हे.न.ब. गढ़वाल विवि.
एवं अध्यक्ष उ. प्र. राज्य उच्च शिक्षा परिषद्

सूर्य, चंद्रमा, गुरु एवं शनि का कुम्भ के आयोजन में विशेष महत्व है। पृथ्वी और चंद्रमा अपने-अपने कालचक्रों में घूमते रहते हैं जिसका प्रभाव हर जीव पर पड़ता है। इन कालचक्रों में सबसे लंबा है 12 × 12= 144 वर्ष का। भारतीय कालगणना के अनुसार प्रत्येक 144 वर्षों में एक बार ऐसा होता है जब सौर मंडल में कुछ विशेष घटनाएं होती हैं जो अध्यात्म, विज्ञान एवं ज्योतिष की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। इन्हीं अवसरों पर महाकुम्भ का आयोजन किया जाता है।

कुम्भ का विशिष्ट ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं वैज्ञानिक महत्व है। इनके आयोजन के दो मुख्य पक्ष हैं - पहला पक्ष पुराणों से उद्धृत है और दूसरा पक्ष विज्ञान सम्मत ज्योतिष से संबंधित है। पौराणिक कथाओं के अनुसार समुद्र मंथन से निकले अमृत कलश (कुम्भ) की सुरक्षा का दायित्व बृहस्पति, सूर्य, चंद्र एवं शनि देवताओं को सौंपा गया था। जब इस कलश पर अधिकार हेतु असुरों (दैत्यों) ने क्रूर आक्रामक रूप धारण कर लिया तो ये चारों देव अमृत कलश लेकर भाग गए थे। तब असुरों ने कलश हस्तगत करने हेतु उनका पीछा किया जो 12 दिन तक चलता रहा। इस अवधि में इन देवों ने अमृत कलश चार स्थानों प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन तथा नासिक में रखा (अन्य मान्यता के अनुसार इन स्थानों पर कलश से अमृत की बूंदे गिरी)। ये बूंदे हरिद्वार में छठे दिन, प्रयागराज में नौवें दिन, नासिक और उज्जैन में बारहवें दिन गिरी। मान्यता है कि देवताओं के ग्रह का एक दिन मनुष्य के एक वर्ष के बराबर होता है। अतः महाकुम्भ का मेला प्रत्येक बारह वर्षों में एक बार उक्त सभी चारों स्थानों पर एक साथ लगता है और अर्धकुम्भ छः वर्षों में एक बार लगता है। हर तीन साल बाद उक्त में से किसी न किसी स्थान पर कुम्भ मेला लगता है। मान्यता है कि बारह साल में मौसमी और पार्थिव स्थिति इस तरह बन जाती है कि चार नदियों का पानी अमृत बन जाता है। ये नदियां हैं प्रयागराज में गंगा (यमुना और सरस्वती के साथ), हरिद्वार में गंगा, नासिक में गोदावरी और उज्जैन में शिप्रा।

इन स्थानों पर आयोजित कुम्भ मेलों में चारों ओर दिव्यता विद्यमान रहती है अतः कुम्भ मेले को अमरत्व का मेला भी कहा जाता है। प्रत्येक कुम्भ मेले में करोड़ों हिन्दू भाग लेते हैं और पूरे भारत से सिद्ध संत भी आते हैं। इनमें निर्वस्त्र रहने वाले राख से लिपटे नागा साधु, शरीर को कठोर तप से तपने वाले उर्ध्वहर तथा मौनव्रती परिवर्जक विशिष्ट होते हैं।

वैज्ञानिक पक्ष : विज्ञान सम्मत ज्योतिष शास्त्र के अनुसार सूर्य, चंद्रमा, बृहस्पति और शनि की विशेष युतियों में कुछ विशेष प्रकार की खगोलीय ऊर्जाएं पृथ्वी पर उक्त चुनिंदा चार स्थानों (प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक) पर स्थित जल भंडारों को प्रभावित करती हैं और यह उर्जित जल मनुष्य के स्वास्थ्य तथा कार्मिक ऊर्जाओं को पुष्ट करता है।

प्रयागराज में कुम्भ तब लगता है जब माघ अमावस्या के दिन सूर्य और चंद्रमा मकर राशि में होते हैं और बृहस्पति (गुरु) मेष राशि में होता है। हरिद्वार में कुम्भ तब होता है जब गुरु

कुम्भ राशि में होता है और सूर्य मेष राशि में प्रवेश करता है। नासिक में कुम्भ के समय सूर्य और गुरु दोनो ही सिंह राशि में होते हैं। उज्जैन में कुम्भ तब होता है जब गुरु कुम्भ राशि में प्रवेश करता है।

इस प्रकार सूर्य, चंद्रमा, गुरु एवं शनि का कुम्भ के आयोजन में विशेष महत्व है। पृथ्वी और चंद्रमा अपने-अपने कालचक्रों में घूमते रहते हैं जिसका प्रभाव हर जीव पर पड़ता है। इन कालचक्रों में सबसे लंबा है 12 × 12= 144 वर्ष का। भारतीय कालगणना के अनुसार प्रत्येक 144 वर्षों में एक बार ऐसा होता है जब सौर मंडल में कुछ विशेष घटनाएं होती हैं जो अध्यात्म, विज्ञान एवं ज्योतिष की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। इन्हीं अवसरों पर महाकुम्भ का आयोजन किया जाता है। कुम्भ के योग के समय गंगा का पानी सकारात्मक ऊर्जा से भरा होता है अतः उस समय इसमें स्नान करने से सभी प्रकार की नकारात्मकता (विकृति, पाप एवं दोष) दूर हो जाती हैं। उस समय गंगा और उक्त उल्लेखित अन्य तीन नदियों का जल सूर्य, चंद्रमा तथा बृहस्पति की सकारात्मक विद्युत चुम्बकीय विकिरणों से भरा होता है। वैज्ञानिक दृष्टि से युक्त प्राचीन ऋषियों ने पृथ्वी पर इन चार स्थानों को चिन्हित किया था जहां पर इन धनात्मक ऊर्जा से युक्त विकिरणों का बहुत प्रबल प्रभाव मनुष्यों एवं अन्य सभी जीवों पर पड़ता है। देव ग्रह का एक दिन पृथ्वी के एक वर्ष का हो सकना विज्ञान के सापेक्षता सिद्धांत के अनुरूप है जिसके अनुसार तीव्र गतिवान पर्यवेक्षक के लिए काल की गति धीमी हो जाती है (टाइम रिटर्डसन)।

वर्तमान विज्ञान में गहन शोध के बाद निष्कर्ष निकाला गया है कि जल में अत्यंत विशेष प्रकार की संरचनाएं निर्मित होती रहती है जिनका आधार वहां का वातावरण, कॉस्मिक ऊर्जाएं और वहां स्थित कंपन होते हैं। मनुष्य शरीर 70 प्रतिशत से अधिक जल से निर्मित है अतः जल के यह क्रिस्टल मानव शरीर को बहुत प्रभावित कर सकते हैं। भारतीय ऋषि अनुसंधान द्वारा हजारों वर्ष पहले जल क्रिस्टल के इस रहस्य को जान चुके थे और विशेष कॉस्मिक परिस्थिति में इन जल क्रिस्टल का लाभ आने वाली संतति को दिया जाए इसका तरीका भी उन्होंने निकाल लिया था। वस्तुतः कुम्भ इसी प्रकार के अनुसंधानों का परिणाम है। जल क्रिस्टल, पदार्थ की एक अवस्था है जिसके गुण पारंपरिक तरल पदार्थ ओर ठोस पदार्थ के बीच के होते हैं। लिक्विड क्रिस्टल्स को तीन मुख्य प्रकारों में विभाजित किया जाता हैं- थर्मोट्रोपिक, लियोट्रोपिक और मेटालोट्रॉपिक। जल में लियोट्रोपिक क्रिस्टल्स की संभावना होती है। यह क्रिस्टल तापमान और विलायक में अणुओं की सांद्रता के आधार पर चरण संक्रमण प्रदर्शित करते हैं। इन्हीं के कारण जल में स्मृति होती है। जल में स्मृति के प्रमाण अनेक क्रियाओं में मिलते हैं जिनमें से होम्योपैथी औषधि को जल द्वारा एविगाद्रों सीमा तक तनुकृत (डाइल्यूट) करने पर भी औषधीय गुणों का पाया जाना है, जिसका कारण जल के अणुओं में संचित औषधि की स्मृति है। लिक्विड क्रिस्टल के प्रकाशीय गुण पदार्थ की परत के माध्यम से प्रकाश की दिशा पर निर्भर करते हैं। विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र लिक्विड क्रिस्टल की एक परत में अणुओं में उन्मुखीकरण को बदल सकता है और इस प्रकार इसके प्रकाशीय गुणों को प्रभावित कर सकता है। गंगा जल में उपस्थित अनेक जैविक पदार्थ जल क्रिस्टल का निर्माण करते हैं। कुम्भ योग के समय गंगा का पानी सकारात्मक ऊर्जा से भरा होता है और इसमें सूर्य, चंद्रमा और बृहस्पति की सकारात्मक विद्युत चुम्बकीय विकिरणों का प्रभाव पड़ता है जिससे जल क्रिस्टल कुंडलित संरचनाओं में व्यवस्थित होकर उस जल में स्नान करते मनुष्य की संपूर्ण चेतना को उर्ध्वमुखी कर देते हैं जो उसकी आध्यात्मिक उन्नति हेतु सोपानों का निर्माण करते है और इस से उसके लिए अति दुर्लभ संभावनाओं के द्वार खुल जाते हैं। उस प्रकार कुम्भ मेला आत्म जागृति एवं आत्म उन्नति का माध्यम बन जाता है।

मनुष्य शरीर 70 प्रतिशत से अधिक जल से निर्मित है अतः जल के यह क्रिस्टल मानव शरीर को बहुत प्रभावित कर सकते हैं। भारतीय ऋषि अनुसंधान द्वारा हजारों वर्ष पहले जल क्रिस्टल के इस रहस्य को जान चुके थे और विशेष कॉस्मिक परिस्थिति में इन जल क्रिस्टल का लाभ आने वाली संतति को दिया जाए इसका तरीका भी उन्होंने निकाल लिया था। वस्तुतः कुम्भ इसी प्रकार के अनुसंधानों का परिणाम है।

गंगा जल में बैक्टीरियोफेज पाए जाते हैं जो बीमारी पैदा करने वाले बैक्टीरिया को खाते हैं जिससे गंगा जल में एंटीबैक्टीरियल गुण होते हैं। गंगाजल दीर्घकाल तक रखने पर भी खराब नहीं होता है। इसमें वातावरण से ऑक्सीजन सोखने की अद्भुत क्षमता होती है जिससे गंगा जल स्वतः ही साफ होता रहता है। गंगाजल के उक्त दिव्य गुणों के आधार पर इसे पतित पावनी कहा जाता है और आदिकाल से प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान में गंगाजल का प्रयोग किया जाता है।

देखने में आया है कि कुम्भ के पवित्र पर्व के अवसर पर गंगा में स्नान करने से पुराने चर्मरोग, कुष्ठ रोग, वात रोग समाप्त हुए हैं। यह भी देखने में आया है कि कुम्भ के पावन पर्व पर स्नान करने पर अनेक साधकों की चेतना उर्ध्वमुखी हुई है। कुम्भ के पावन अवसर पर गंगा स्नान करने पर कई मनुष्यों के दुर्दिन समाप्त होकर अच्छे दिन आए हैं अर्थात् उनपर ग्रहों के प्रभाव कम हुए हैं। इस प्रकार से कुम्भ के पावन पर्व पर निर्दिष्ट चार स्थानों पर पवित्र नदियों में स्नान करने पर मनुष्य को शारीरिक, मानसिक, हार्दिक एवं आत्मिक लाभ होते हैं और दिव्यता की अनुभूति होती है।

शास्त्रीय आलोक में शोध का विषय कुम्भ स्थल और कुम्भ कथा

प्रो. सुन्दर नारायण झा
आचार्य -वेद विभाग, श्रीलाल बहादुर शास्त्री
राष्ट्रीय संस्कृत विवि. दिल्ली

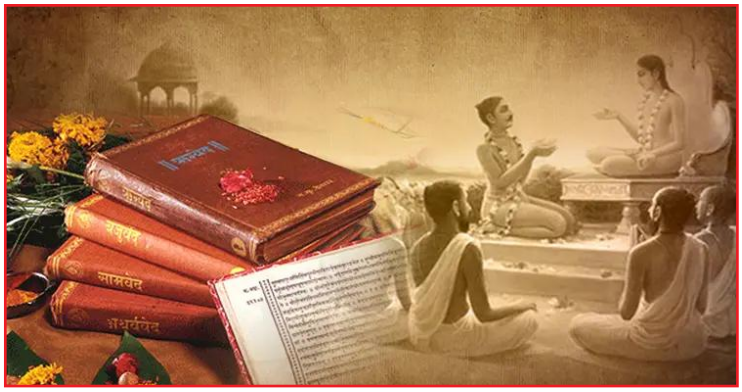

एक बार महान् तपस्वी दुर्वासा ऋषि के शाप से अखिल लोक की लक्ष्मी अन्तर्हित हो गई थीं। जिसके कारण देव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, दैत्य, दानव, नाग, मनुष्य, राक्षस, पशु, पक्षी, कृमि, कीट, लता, गुल्म, वृक्ष, वनस्पत्यादि समस्त चराचर प्राणी मन्दभाग्य होकर दुःखसागर में निमग्न हो गये थे। दुःख की निवृत्ति हेतु क्षीरसागरशायी सर्वजगन्निवास भगवान विष्णु ने उन्हें मिलकर सविधि क्षीरोदधि मंथन करने का आदेश दिया।

गंगा -यमुना के संगम स्थल प्रयाग को तीर्थों का राजा (तीर्थराज) नाम से जाना जाता है। ऋग्वेदोक्त नदीसूक्त में नदियों की स्तुति करते हुए कहा गया है कि पृथ्वी पर भिन्न-भिन्न रूप और गतियों से बहने वाली नदियां संसार के समस्त मानवों को लाभ पहुंचाने वाली हैं। मत्स्यपुराण के 109वें अध्याय में मार्कण्डेय ऋषि युधिष्ठिर को प्रयाग का माहात्म्य बतलाते हुए कहते हैं कि-

यथा सर्वेषु भूतेषु ब्रह्म सर्वत्र दृश्यते।
ब्राह्मणे चास्ति यत्किञ्चित्तद्ब्राह्ममिति चोच्यते॥
एवं सर्वेषु भूतेषु ब्रह्म सर्वत्र पूज्यते।
तथा सर्वेषु लोकेषु प्रयागं पूजयेद् बुधः॥
पूज्यते तीर्थराजस्तु सत्यमेव युधिष्ठिर।
ब्रह्मापि स्मरते नित्यं प्रयागं तीर्थमुत्तमम्॥
तीर्थराजमनुप्राप्य न चान्यत् किञ्चिदर्हति।
कोहि देवत्वमासाद्य मनुष्यत्वं चिकीर्षति॥

उक्त प्रकार से प्रयाग को तीर्थराज की संज्ञा देना तथा सर्वलोक पितामह ब्रह्माजी द्वारा प्रयागराज का स्मरण किया जाना इत्यादि वर्णन प्रयागराज को पृथ्वी पर अलौकिक धाम का स्वरूप प्रतिपादित करता है। पुराणों में यह भी कहा गया है कि प्रजापति ब्रह्माजी ने धरती पर आहुति की तीन वेदियां बनायी थीं- कुरुक्षेत्र, प्रयाग एवं गया। इनमें प्रयाग मध्यम वेदी है। माना जाता है कि यहां गंगा, यमुना और पाताल गामिनी सरस्वती तीन सरिताओं का संगम हुआ है।

प्रजापति-क्षेत्र के नाम से विख्यात प्रयागतीर्थ में स्नानमात्र से स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है, जिसकी मृत्यु प्रयाग में होती है उसका पुनर्जन्म नहीं होता तथा ब्रह्मा आदि देवगण वहां संगठित होकर सबकी रक्षा करते हैं।

प्रयाग की महिमा का संक्षेप में वर्णन करने के उपरान्त मैं पाठकों का ध्यान शास्त्रों में वर्णित द्वादश कुम्भस्थान की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। देवता एवं असुर ये दोनों प्रजापति की सन्तान हैं, प्रजापति की दो पत्नियां दिति एवं अदिति थीं। दिति के पुत्र दैत्य एवं अदिति के पुत्र आदित्य कहलाते हैं।

देवों एवं असुरों के बीच वैमात्रेय (विमाता के पुत्र) भाई का सम्बन्ध है, उसमें असुर ज्येष्ठ तथा देव कनिष्ठ हैं। पैतृक सम्पत्ति में दोनों का समान अधिकार होना चाहिए किन्तु असुरों ने देवताओं का भाग भी अपने अधिकार में ही रखकर उन्हें उनके भाग से वंचित कर दिया था। देवों द्वारा अपना भाग मांगे जाने पर असुरों ने देवों को प्रताड़ित करना आरम्भ किया। उसके परिणामस्वरूप अनेक बार देवों एवं असुरों के बीच प्रतिस्पर्धा हुई, यही देवासुर संग्राम का मुख्य कारण था। शास्त्र कहते हैं कि जो अधिकृत व्यक्ति को उसका अधिकार नहीं देता है, वह अराति अर्थात् शत्रु है, राक्षस है, राक्षस शब्द

रक्ष-धातु से बनता है, इसका अर्थ होता है रोकने वाला। अर्थात् जो दूसरे की उन्नति को रोके वह राक्षस है। इस दृष्टि से असुर दोनों नाम से भी जाने जाते हैं।

बहुत पहले की बात है कि एक बार महान तपस्वी दुर्वासा ऋषि के शाप से अखिल लोक की लक्ष्मी अन्तर्हित हो गई थीं। जिसके कारण देव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, दैत्य, दानव, नाग, मनुष्य, राक्षस, पशु, पक्षी, कृमि, कीट, लता, गुल्म, वृक्ष, वनस्पत्यादि समस्त चराचर प्राणी मन्दभाग्य होकर दुःखसागर में निमग्न हो गये थे। दुःख की निवृत्ति हेतु समुचित मार्ग का अन्वेषण करते हुए वे लोग ब्रह्मलोक पहुंचे। ब्रह्माजी की आज्ञा से वे सभी क्षीरसागरशायी सर्वजगन्निवास भगवान विष्णु की आराधना करने लगे। उनकी प्रार्थना से प्रसन्न होकर अखिललोकनायक भगवान श्रीविष्णुजी ने उन्हें मिलकर सविधि सत्रयागात्मक क्षीरोदधि मंथन करने का आदेश दिया। कथा के अनुसार क्षीरोदधि मंथन में 14 रत्नों में अमृत भी प्राप्त हुआ जिसे दैत्यों से बचाने के लिए भगवान विष्णु ने नवयौवना का रूप धरा था और इस संघर्ष में जिस मुहूर्त्त में जहां-जहां मंथनोत्थित अमृत विष्णु के द्वारा गिराया गया उन-उन मुहूर्त्तों में उन-उन स्थानों पर इस धरातल पर कुम्भयोग होता है। उपर्युक्त कथा के अनुसार अमृतपूर्ण घट क्षीरसमुद्र के मंथन से उत्पन्न हुआ ऐसा इतिहास पुराणादि की कथाओं से सिद्ध होता है। इसी क्षीरोदधि के मध्य गज एवं ग्राह का वह भयंकर युद्ध हुआ था जहां भगवान विष्णु अपने अनन्य भक्त गज का उद्धार करने के लिए पहुंचते हैं। इस कथा का वर्णन भी वामन पुराण के 85 वें अध्याय में किया गया है। गज एवं ग्राह का युद्ध क्षीरसागर में जिस स्थान पर हुआ वह स्थान हरिहर क्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध है, जो आज बिहार प्रान्त के सोनपुर स्थित सोननदी के स्थान पर माना जाता है। सोनपुर का मेला या हरिहर क्षेत्र का मेला उसी स्थान पर लगता है।

हम जानते हैं कि अनेक आक्रान्ताओं द्वारा समय-समय पर भारतवर्ष की प्राचीन एवं पूर्ण समृद्ध सभ्यता तथा संस्कृति पर कुठाराघात किया जाता रहा है। अनेक शास्त्र नष्ट किये गये और अनेक हम लोगों की दृष्टि से ओझल हो गये। आज भी देहात के गांवों से अनेक पाण्डुलिपियां प्राप्त हो रही हैं। अतएव हमें अपनी प्राचीन धरोहरों को पुनः प्रतिष्ठापित कर भारत की अक्षुण्णता एवं अस्मिता को यथारूप देने का सत्प्रयास सदैव करते रहना चाहिए।

हमारे पूर्वज न जाने कितने वर्षों से सूर्यग्रहण एवं चन्द्रग्रहण के समय कुरुक्षेत्रस्थ ब्रह्मसरोवर में स्नान करने की परम्परा को निभाते आ रहे हैं। परन्तु यह स्थान इतना अधिक महत्वपूर्ण होते हुए भी न जाने कितने वर्षों से इसकी महत्ता से वंचित रहा है।

वामन पुराण के 25 वें अध्याय में तथा महाभारत के शान्तिपर्व में यह कहा गया है कि क्षीरोदधि के उत्तर में श्वेतद्वीप अर्थात् हिमालय है। भगवान श्रीहरि क्षीरोदधि मंथन के उपरान्त असुरों से अमृत को बचाने के लिए कुम्भ को क्षीरसागर में डुबाकर अमृतलिप्त चमस लेकर आगे चले थे, उनके पीछे-पीछे असुरगण दौड़ रहे थे, यह कथा पहले वर्णित है। भगवान के हाथ में स्थित चमस से वह अमृत रस तुला राशि में जब सूर्य थे तब शाल्मलीवन (सिमरिया) में गिरा था, इस प्रमाण के आधार पर तुलार्क सूर्य में सिमरिया धाम में कुम्भ योग का होना स्वतः सिद्ध ही है। यह तथ्य हमलोगों की दृष्टि से ओझल हो गया था, जिस कारण सिमरिया के कुम्भ का प्रचलन बीच में लुप्तप्राय था। अब मिथिला के शीर्ष विद्वानों ने इस ओर ध्यान देकर प्रमाण एवं तर्कों से तथ्य को सामने लाकर सिमरिया धाम में कुम्भ मनाने का जो प्रयास किया है, सचमुच वह स्तुत्य एवं श्लाघ्य है।

जब सूर्य वृश्चिक राशि में स्थित होता है तब कुरुक्षेत्रस्थ पुण्यसलिल से परिपूर्ण ब्रह्मसरोवर में कुम्भ महापर्व का आयोजन किया जाना भारतवर्ष को प्राचीन गौरव से समन्वित करना एवं सनातन संस्कृति की संस्थापना करना ही है। हमारे पूर्वज न जाने कितने वर्षों से सूर्यग्रहण एवं चन्द्रग्रहण के समय कुरुक्षेत्रस्थ ब्रह्मसरोवर में स्नान करने की परम्परा को निभाते आ रहे हैं। परन्तु यह स्थान इतना अधिक महत्त्वपूर्ण होते हुए भी न जाने कितने वर्षों से इसकी महत्ता से वंचित रहा है। रुद्रयामल ग्रन्थ में शिव पार्वती के संवाद सहित 12 स्थानों पर कुम्भ के एकाधिक शास्त्रीय प्रमाण हैं जिन पर शोध की आवश्यकता है। कुछ विद्वान कहते हैं कि क्षीरसागर जो नभमण्डल में है उसे ये लोग धरती पर उतारने में लगे हैं। ब्रह्म का सरोवर तो परलोक से सम्बन्धित है उसकी कल्पना धरती पर करना मूर्खता ही है। मैं उन लोगों को आश्वस्त करना चाहता हूं, कि आप सही कह रहे हैं पर उतना नहीं जितना कि है। चूँकि 'यत्पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे' यह कथन कथमपि असत्य नहीं है। पुराणादि में आकाश मण्डल को नववीथियों में विभाजित किया गया है। उतनी ही वीथियां उन्हीं नामों से पृथिवी पर भी कही गई हैं। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ब्रह्म का ही विवर्त है।

निष्कर्ष– इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि कुम्भ और क्षीरोदधि मंथन से सम्बंधित अनेक शास्त्र एवं सन्दर्भ हमारे पूर्वजों ने हमें उपलब्ध कराया है जिनका स्वाध्यायाध्ययन, संरक्षण, चिन्तन, विश्लेषण, तथ्यानुकूल अन्वेषण करना परमावश्यक है। अनेक ऐसे भी सन्दर्भ हैं जिनके मूलस्रोत हमें नहीं मिलते हैं। किन्तु मूलस्रोत के अनुपलब्ध होने से हम उन्हें अप्रामाणिक कह दें ये कथमपि उचित प्रतीत नहीं होता। चूँकि हमारे पूर्वाचार्यों ने जिस बात की ओर संकेत किया है, निश्चित रूप से पहले कभी वे हमारे शास्त्र के ही अंग रहे होंगे। जब तक शास्त्रों से सम्बंधित हमारा ज्ञान अपूर्ण हैं तब तक हमारा विश्वकल्याणात्मक कार्य अपूर्ण है ऐसा सम्पूर्ण आर्यावर्त के विद्वत्समाज को सोचना ही पड़ेगा। क्योंकि कहीं पर मैंने वृन्दावन में भी कुम्भयोग की चर्चा पढ़ी है। हो सकता है वह किसी भक्ति के सन्दर्भ में कहा गया हो परन्तु अन्वेषणीय तो है ही। अतः भारत के कुम्भ पर्व पर परियोजना बनाकर गहन शोध करने की महती आवश्यकता है। ■

प्रयागराज महाकुम्भ का अनुपम प्रबंधन

अशोक कुमार सिन्हा
सचिव, विश्व संवाद केन्द्र, अवध

> **सातवीं शताब्दी में चीनी यात्री ह्वेनसांग अपने यात्रा वृतांत में लिखता है कि प्रत्येक 5 वर्ष बाद सम्राट हर्षवर्धन कुम्भ प्रयाग की व्यवस्था और दान पुण्य में अपने राजकोष की पूरी संपत्ति समाप्त कर देते थे। आदि शंकराचार्य ने सनातन धर्म के विभिन्न मत-सम्प्रदायों को व्यवस्थित रूप देकर संन्यासी अखाड़ों की स्थापना की। उन्होंने सनातन रक्षण-भ्रमण और तीर्थाटन परंपरा को पुनर्जीवित किया।**

ऋग्वेद के सूक्त (10.75) में कहा गया है कि जहां कृष्ण और श्वेत जल वाली दो सरिताओं का संगम है वहां स्नान करने से मनुष्य स्वर्गारोहण करता है। मत्स्य, स्कंद, काशी और पद्म पुराण में प्रयागराज को तीर्थराज नाम से अभिहित किया गया है। वर्तमान में 144 वर्ष बाद विशेष संजोग से 13 जनवरी से 26 फरवरी 2025 तक महाकुम्भ लगा है। सम्राट हर्षवर्धन के समय कुम्भ यश की पताका फहरा रहा था। सातवीं शताब्दी में चीनी यात्री ह्वेनसांग अपने यात्रा वृतांत में लिखता है कि प्रत्येक 5 वर्ष बाद सम्राट हर्षवर्धन प्रयाग कुम्भ की व्यवस्था और दान पुण्य में अपने राजकोष की पूरी संपत्ति समाप्त कर देते थे। आदि शंकराचार्य ने सनातन धर्म के विभिन्न मत-सम्प्रदायों को व्यवस्थित रूप देकर संन्यासी अखाड़ों की स्थापना की। उन्होंने सनातन रक्षण-भ्रमण और तीर्थाटन परंपरा को पुनर्जीवित किया।

1857 की क्रांति के बाद अंग्रेज कुम्भ मेले में एकत्रित भीड़ से डरने लगे थे। कहीं किसी क्रांति को हवा न लगे इसलिए कुम्भ को शर्तों के दायरे में लाया गया। अंग्रेज कुम्भ पर भारी टैक्स लगाकर आमदनी भी करते थे। स्वाधीन भारत में 1954 में पहला कुम्भ पड़ा जिसमें राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने एक मास का कल्पवास किया था तथा प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने भी संगम में डुबकी लगाई थी। उस समय सरकार ने एक करोड़ 10 लाख रुपया व्यवस्था में व्यय किया था। उस समय देश की कुल आबादी 30 करोड़ थी जिसमें से लगभग एक करोड़ श्रद्धालुओं ने संगम में डुबकी लगाई थी। 2013 के कुम्भ मेले में विश्व हिन्दू परिषद ने आयोजित धर्म संसद में धर्म गुरुओं तथा उपस्थित श्रद्धालुओं ने अयोध्या के भावी राम मंदिर के प्रारूप की स्वीकृति ली जिसने भारतीय राजनीति और भारतीय संस्कृति की दशा और दिशा दोनों बदल दी थी।

वर्तमान महाकुम्भ में व्यवस्था, भव्यता, दिव्यता, सुरक्षा तथा सौन्दर्यबोध के अद्वितीय प्रयासों से नया कीर्तिमान बना है। इस भव्य आयोजन में लगभग 45 करोड़ श्रद्धालुओं के कुम्भ स्नान की संभावना है।19 जनवरी तक लगभग 7 करोड़ श्रद्धालु संगम में डुबकी लगा चुके थे, जो अपने आप में कीर्तिमान है। उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने मेला प्रारंभ होने से पूर्व 6 बार प्रयागराज का प्रवास तथा समीक्षा बैठकें कर आवश्यक निर्देश दिए। संगम जल का स्वयं आचमन कर उसकी शुद्धता तथा निर्मलता का विश्वास जनता को दिलाया। 13 दिसंबर 2024 को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी प्रयागराज पहुंच कर व्यवस्था का निरीक्षण किया तथा 86 हजार करोड़ रुपए की लागत से पूर्ण होने वाली कुम्भ क्षेत्र की कुल 500 परियोजनाओं का लोकार्पण किया। व्यवस्था की दृष्टि से 365 वर्ग किलोमीटर का एक विशेष कुम्भ नगर जिला घोषित किया गया तथा त्वरित व्यवस्था हेतु आवश्यक अधिकारियों और कर्मचारियों की तैनाती की गई। केंद्रीय संगम के 60 वर्ग किलोमीटर मेला क्षेत्र को स्थापित कर योगी जी ने सनातन संस्कृति की एकता और समरसता स्थापित करने वाले इस भव्य आयोजन को

अविस्मरणीय बना दिया है। मुख्यमंत्री जी ने मेले की व्यवस्था पर 7 हजार करोड़ रुपए के बजट को व्यय कर दुनिया के सबसे बड़े जनसांस्कृतिक, धार्मिक आयोजन के इस सनातन पर्व को वैश्विक उद्धरण के रूप में प्रस्तुत कर दिया है।

कुल 4000 हेक्टेयर क्षेत्रफल को 25 सेक्टरों में विभाजित कर प्रत्येक को जनसुविधाओं से सम्पन्न बनाया गया है। 1850 हेक्टेयर क्षेत्रफल में 5 लाख वाहनों के लिए 5 विशेष पार्किंग स्थल बनाए गए। 10 लाख सैप्टिक-टैंक युक्त बायोटॉयलेट (शौचालय) बनाए गए तथा 10 हजार स्वच्छता सेवियों को तैनात किया गया है। श्रद्धालुओं के लिए एक लाख साठ हजार टेंट लगाए गए हैं। मेला क्षेत्र में कुल 67000 एल.इ.डी. स्ट्रीट लाइट, 66 नए ट्रांसफार्मर, 2016 हाइब्रिड स्ट्रीट लाइट, दो नए विद्युत सब स्टेशन तथा 1249 किलोमीटर पेयजल पाइपलाइन, 200 वाटर एटीएम, 85 नलकूप स्थापित हैं। उत्तर प्रदेश के विभिन्न जनपदों से कुम्भ मेला पहुंचने के लिए 7000 विशेष बसों का संचालन किया जा रहा है। मेला क्षेत्र तक पहुंचने के लिए विशेष स्नान पर्व के एक दिन पूर्व तथा एक दिन बाद तक 550 निःशुल्क शटल बसों का संचालन हो रहा है। शेष दिनों में नाममात्र का किराया वसूला जाएगा। मेला क्षेत्र में 7 बस स्टैंड, 30 पैंटून ब्रिज, 9 पक्के घाट, 7 रिवर फ्रंट, 12 किलोमीटर में अस्थाई घाट, 14 नए फ्लाई ओवर तथा अंडरपास से प्रयागराज का नवीनीकरण किया गया है।

स्नान करने के बाद अन्य मुख्य दर्शन स्थलों के कुल 11 नए कॉरिडोर बनाकर प्रयागराज को देश का पहला भव्य तीर्थ कॉरिडोर नगर बना दिया गया है। मुख्यरूप से अक्षयवट, भारद्वाज आश्रम, हनुमान मंदिर, श्रृंगवेरपुर कॉरिडोर के साथ ब्रह्मा जी का यज्ञ स्थल, दशाश्वमेघ घाट व मंदिर, नागवासुकी मंदिर तथा द्वादश माधव मंदिर का जीर्णोद्धार किया गया है। मेला क्षेत्र में AI तकनीकयुक्त 2600 से अधिक CCTV कैमरे स्थापित कर उन्हें केन्द्रीयकृत मॉनिटरिंग रूम से जोडा गया है।

रेल, वायु मार्ग और बस रूट से प्रयागराज संपूर्ण भारत से जुड़ा है। 13000 से अधिक ट्रेने प्रयागराज से होकर संचालित की जा रही हैं। प्रयागराज नगर में कुल नौ रेलवे स्टेशन क्रमश : प्रयागराज जंक्शन, सूबेदारगंज, प्रयाग जक्शन, रामबाग, फफामऊ, झूसी, छिवकी, प्रयागराज संगम तथा नैनी रेलवे स्टेशन संचालित हैं। स्टेशन सहित पूरे मेला क्षेत्र में कुल 12 भाषाओं में सूचना प्रसारण की व्यवस्था भी बनाई गई है। 55 हवाई उड़ानों के साथ एयरपोर्ट व्यवस्था को भी समुन्नत किया गया है।

मेला क्षेत्र में कुल 5 हजार ई-रिक्शा संचालित हैं। बड़े रेलवे स्टेशनों पर भगदड़ से बचाव हेतु 10 हजार की क्षमता के बड़े होल्डिंग आश्रय स्थल बने हैं। स्टेशन तथा स्टेशन के बाहर QR कोड से तथा सैकड़ों टिकट कलेक्टरों के हाथ में हैंडहोल्ड ऑटोमैटिक मशीन से टिकट विक्रय की व्यवस्था है।

अभेद्य सुरक्षा व्यवस्था में 50 हजार से अधिक पुलिस बल, 56 पुलिस स्टेशन, 2 पुलिस लाइन, एक ट्रैफिक पुलिस लाइन, 2 हजार ड्रोन कैमरे, वाटर ड्रोन, जल पुलिस, घुड़सवार पुलिस, NSG की पांच टुकड़ियां, डायल 112 की 296 टीम, 95 जिप्सी वाहन, 231 मोटरसाइकल तैनात हैं। मेला क्षेत्र को एडवांस ए आई ड्रिवन डेटा एनेलिटिक्स सोल्यूशन सिस्टम से सर्विलांस और सुरक्षा को अभेद्य बनाया गया है। शहर में प्रवेश हेतु 7 राजमार्गों की पूर्ण नाकेबंदी है तथा चेकिंग चौकियां स्थापित है। एमडीआरएफ की टीम को सन्नद्ध रखा गया है।

मेला क्षेत्र में कुल 43 अस्पतालों में 24 घंटे 381 चिकित्सक उपलब्ध हैं। 24 घंटे प्रसूति रोग विशेषज्ञों की उपलब्धता है। नगर के चिकित्सालय में 6000 अतिरिक्त बेड की व्यवस्था है। एयर व जल एंबुलेंस उपलब्ध है। 125 रोड एंबुलेंस कार्यरत है। संपूर्ण चिकित्सा व्यवस्था निःशुल्क है। समुचित दवाएं, क्रिटिकल केयर यूनिट, ओटी, ऑक्सीजन, मॉनिटर, ए.डी. मशीन तथा बेसिक लाइफ सपोर्ट 24 घंटे उपलब्ध हैं। मेला क्षेत्र में अलग ट्रैक सूट में ट्रैवल गाइड, 120 पार्किंग स्थल हैं। 5 लेन चौड़ी सड़क पर 13 प्रमुख आध्यात्मिक अखाड़ों की स्थापना की गई हैं। कल्पवास के लिए पर्ण कुटियों की अलग से व्यवस्था है।

वर्तमान महाकुम्भ में व्यवस्था, भव्यता, दिव्यता, सुरक्षा तथा सौन्दर्यबोध के अद्वितीय प्रयासों से नया कीर्तिमान बना है। इस भव्य आयोजन में लगभग 45 करोड़ श्रद्धालुओं के कुम्भ स्नान की संभावना है।

संपूर्ण व्यवस्था को डिजिटलाइज्ड किया गया है। AI बेस्ड संचार व्यवस्था, 192 किलोमीटर ऑप्टिकल फाइबर, AI बेस्ड खोया पाया विभाग, 3 प्रकार की सूचना एवं सहायता देने हेतु मेला क्षेत्र के हर खंभे पर QR कोड पोस्टर, प्रसार भारती द्वारा संचालित 24 घंटे कुम्भवाणी जैसी व्यवस्थाएं, तकनीकी और अध्यात्म का अद्भुत संगम बना रहें है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने पूरे कुम्भ क्षेत्र को पर्यावरणयुक्त तथा प्लास्टिकमुक्त क्षेत्र बनाने का प्रण लिया है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु संघ स्वयंसेवक करोड़ों की संख्या में सूती झोले में कटोरीदार स्टील की थाली का वितरण करते हुए अन्य सेवाकार्यों में भी जुटे हैं।

मेला क्षेत्र में अनेकों प्रदर्शनी मंडप, सांस्कृतिक मण्डप सनातन और विकास कार्यों के प्रचार हेतु स्थापित हैं जहां प्रवेश निःशुल्क हैं। नगर के प्रत्येक चौराहों को वेद-पुराण की गाथाओं के अनुसार सजाया गया है। मानसिक शांति हेतु वाइल्ड लाइफ की टीम बर्ड साउंड थेरेपी की व्यवस्था उपलब्ध करा रही है। देशभर से आए कला एवं हस्तशिल्पियों के वस्तुओं की खरीदारी भी आप कर सकतें हैं। स्वच्छ एवं पावन त्रिवेणी जल का आचमन कर घर के पूजाघर के लिए भी जल कलश लाइए। आप प्रयागराज पधारिए। अध्यात्म, संस्कृति और धार्मिक पुण्य की डुबकी लगाइए। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की सांस्कृतिक आत्मा का दर्शन कीजिए। ऐतिहासिक, सांस्कृतिक अविस्मरणीय प्रयागराज आप की प्रतिक्षा में तत्पर है।

कुम्भ : संस्कारों के सागर मंथन से पुनर्जागरण

श्याम किशोर सहाय
संपादक, संसद टीवी

सम्पूर्ण विश्व में भारत एकमात्र ऐसा देश है जो नैसर्गिक रूप से निर्मित है। जिसकी सीमाएं पृथ्वी के मुकुट सदृश्य अविचल पर्वतों और पुण्य सलिला नदियों ने अपने आंचल से रेखांकित की हैं। इस पावन धरा पर ईश्वर की अहेतुकी कृपा से कई लीलाएं हुईं। मानव सभ्यता का अंकुर यहां सर्वप्रथम प्रस्फुटित हुआ। वेद के रूप में सृष्टि के ज्ञान का अवदान भी इसी भूमि को मिला। सप्त ऋषियों के रूप में जीवन का मार्गदर्शन करने वाले ज्योतिपुंजों ने इस भूमि को अपने तप से सिक्त किया। हरिश्चंद्र, जनक, श्री राम और श्री कृष्ण, चंद्रगुप्त मौर्य, विक्रमादित्य और हर्षवर्धन जैसे पराक्रमी, धर्म और नीति के ज्ञाता सहस्त्रों प्रतापी राजाओं ने भारतीय इतिहास के पृष्ठों को स्वर्णांकित किया है।

दैवयोग से यह भारत भूमि समुद्र मंथन एवं देवासुर संग्राम की कथाओं से अभिमंत्रित है। समुद्र मंथन भारत की सनातन सभ्यता का अद्भुत आख्यान है। इसमें धर्म, नीति, कूटनीति, नियम, प्रबंधन और संगठन रचना सन्निहित है। मंथन से आविर्भूत 14 रत्नों में हमारी संस्कृति का ऐश्वर्य समाया है। मंथन कथा में अमृत का महत्व है, तो 'कुम्भ' के रूप में यह मानव सभ्यता के सम्मिलित प्रयास का सबसे विशाल प्रारूप भी है।

जीवन आदि से अंत तक निरंतर सृजन है, वैसे ही संस्कृति भी निरंतर संस्कार क्रम है। विचार, ज्ञान, अनुभव, कर्म आदि सभी क्षेत्रों में, जब तक हमारा सृजन क्रम चलता रहता है, तब तक हम जीवित हैं। संस्कृति के संबंध में भी, यही बात सत्य है परन्तु विकास की किसी स्थिति में भी जैसे शरीर और अन्तर्जगत के मूल तत्व नहीं बदलते, उसी प्रकार संस्कृति के मूल तत्वों का बदलना भी संभव नहीं। प्रख्यात साहित्यकार महादेवी वर्मा ने अपने विचारों में जीवन, सृजन और संस्कृति के सहज अंतर्संबंध और उसकी निरंतरता को सरलता से समझाने की कोशिश की है। उनकी कसौटी पर भारतीय संस्कृति दो सर्वथा विपरीत आक्षेपों से संघर्ष करती नजर आती है। पहला यह कि यह अपने विकास क्रम में आनंददायक स्थिति को प्राप्त करने के बाद यह संस्कृति कहीं न कहीं जड़ हो गयी। निरंतर सृजन और विकास का उसमें सर्वथा अभाव रहा। दूसरा आक्षेप यह कि बाहरी आक्रमणों के थपेड़ों को झेलते और अपनी विकृतियों से लड़ते हुए उसने विकास तो किया लेकिन इस क्रम में उसके मूल तत्व बदल गये।

गौर करें तो दोनों ही आक्षेप कई अवसर पर स्पष्ट रूप से सत्य प्रतीत होते हैं। भारतीय संस्कृति में आए इस विचलन के लिए निरंतर आक्रमणों और परतंत्रता के लंबे कालखंड को कारण मानना गलत न होगा। इन आक्रमणों में कई तो नितांत हिंसक स्वरूप के थे। परतंत्रता के अपेक्षाकृत बाद के कालखंड में भारतीय संस्कृति को छिन्न-भिन्न करने और नीचा दिखाने की सुनियोजित साजिश भी की गयी। हिंसा और बल द्वारा हमें जीतने की कोशिशों ने, जहां हमें शारीरिक और भौतिक रूप से

समुद्र मंथन भारत की सनातन सभ्यता का अद्भुत आख्यान है। इसमें धर्म, नीति, कूटनीति, नियम, प्रबंधन और संगठन रचना निहित है। मंथन से आविर्भूत माता लक्ष्मी, कल्पवृक्ष और कामधेनु गाय सहित 14 रत्नों में हमारी संस्कृति का ऐश्वर्य समाया है। मंथन कथा में अमृत का महत्व है, तो 'कुम्भ' के रूप में यह मानव सभ्यता के सम्मिलित प्रयास का सबसे विशाल प्रारूप भी है।

कमजोर किया, वहीं हमारी सांस्कृतिक चेतना पर भी चोट की। वेद-पुराण को गडरियों के गीत बताए जाने से लेकर देवभाषा संस्कृत को विकास में बाधक बताने वालों ने लंबे समय में अपने कुत्सित प्रयासों में सफलता पायी। एक समय ऐसा आया कि स्वयं को देखने की हमारी दृष्टि भी हमारी अपनी नहीं रही। परिणाम यह हुआ कि पहले हमारा आत्मविश्वास डिगा फिर आत्मसम्मान और फिर तो हम आत्मालोचना के आदि हो गये। आज बड़ी संख्या में अपनी संस्कृति की आलोचना में आनंद लेने वाले लोग आपको मिल जाएंगे। आज भारत की युवा पीढ़ी में पाश्चात्य प्रभाव से कुपोषित ऐसे अनेक युवा मिल जायेंगे, जिन्हें अपनी माँ, मातृभूमि और मातृभाषा अच्छी नहीं लगती। ऐसी स्थिति में कुम्भ जैसे महापर्व हमें पुनः अपनी समृद्ध संस्कृति और सांस्कृतिक मूल्यों से स्पंदित करते हैं। हमारे जींस में, अवचेतन मन में सुप्त अवस्था में निहित सनातन संस्कारों को सक्रिय करते हैं, यह बाहर का कुम्भ हमारे भीतर भी समुद्र मंथन की स्थितियां उत्पन्न करता है जिससे हमारे भीतर भी रत्नों की प्राप्ति होती है जो हमारी चेतना को परिष्कृत करती है जिससे यह ब्रह्माण्डीय ऊर्जा के साथ एकाकार होती है। यही भौतिक कुम्भ का आध्यात्मिक महत्व है। बाहर गंगा, यमुना और गुप्त सरस्वती का संगम होता है तो इस सायकोसोमेटिक बॉडी में सूक्ष्म शरीर में ऊर्जा के चैनल्स खुलते हैं, ईडा, पिंगला और सुषुम्ना का संगम हो जाता है, इसीलिए करोड़ों योगी आदि योगी शिव का रूप धारण कर इस अद्भुत समागम का हिस्सा बनते हैं।

यह हमारा दुर्भाग्य रहा कि परतंत्रता के लंबे कालखंड ने हमें अपने प्राचीन इतिहास के प्रति हीन भावना से भर दिया। हमारी अज्ञानता और निर्मलता के चलते हमें हमारी जड़ों से काटने का विदेशी विधर्मियों का षड्यंत्र काफी हद तक सफल रहा। किसी समय भौतिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक शिखर पर रहने वाला हमारा भारत, कालक्रम में भुखमरी, निर्धनता और निकृष्टता का पर्याय बन गया। स्वतंत्रता के बाद 'स्व' के भाव जागरण का जो उपक्रम होना चाहिए था दुर्भाग्य से वह भी नहीं हो पाया। परंतु कालचक्र की अपनी गति होती है। इसके प्रभाव में पिछले लगभग एक दशक से हर भारतीय के मन में स्वयं की संस्कृति और इतिहास के प्रति एक ललक जगी है। गौरवशाली अतीत के सुनहरे अध्यायों को अपनी व्याख्या देने का मानस और साहस दोनों बना है। समुद्र मंथन की कथा की पुनर्व्याख्या इस कड़ी में एक प्रयास है। महाकुम्भ पर्व के अवसर पर हमारे पूर्वजों द्वारा प्रदत्त विराट सांस्कृतिक मंथन और उस मंथन से ऊर्जा लेकर जीवन के विविध आयामों में अपने पुरातन जीवन मूल्यों को हमारी नई पीढ़ी स्वयं में अभिसिंचित करे, जीवन पथ पर आगे बढ़ते हुए भारत के पुनर्जागरण में सहयोगी हो उस उद्देश्य से 'समुद्र मंथन' के मूल, आदि कुम्भ का मंथन करना अनिवार्य हो जाता है।

बिहार की ऐतिहासिक धरती पर गंगा के पावन तट के समीप सिमरियाधाम में पिछले कोई चार दशक से धूनी रमाए संत करपात्री अग्निहोत्री परमहंस स्वामी चिदात्मन जी महाराज के मन में कुम्भ की जननी स्थली और सुप्त कुम्भ स्थलों के पावन पुनर्जागरण का विचार बिन्दु कोई दो ढ़ाई दशक से आकार ले रहा था। जिस समुद्र मंथन का आख्यान हमें सभी पावन शास्त्रों में मिलता है, उस स्थली का अन्वेषण अभी तक नहीं हुआ था। स्वामी जी के प्रयासों से 2008 में इस सन्दर्भ में विद्वानों के मध्य मंथन प्रारंभ हुआ।

आज भारत की युवा पीढ़ी में पाश्चात्य प्रभाव से कुपोषित ऐसे अनेक युवा मिल जायेंगे, जिन्हें अपनी माँ, मातृभूमि और मातृभाषा अच्छी नहीं लगती। ऐसी स्थिति में कुम्भ जैसे महापर्व हमें पुनः अपनी समृद्ध संस्कृति और सांस्कृतिक मूल्यों से स्पंदित करते हैं।

क्षीरसागर कहां रहा होगा? क्या आज मंदार पर्वत ही वह मंदार है, जिसे मथनी बनाकर समुद्र मंथन हुआ? या बाबा वासुकीनाथ धाम ही इस महान उपक्रम में रस्सी बने थे? आखिर और क्या-क्या प्रमाण हैं? जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि मिथिलांचल के क्षेत्र में ही उस समय समुद्र मंथन हुआ होगा? इसके साथ ही स्वामी जी ने पौराणिक काल में द्वादश स्थानों पर कुम्भ लगने की कल्पना भी दी। हरिद्वार, नासिक, प्रयाग और उज्जैन तो स्थापित कुम्भ हैं। इनके साथ-साथ आठ और ऐसे स्थान रहे जहां कुम्भ की परंपरा रही। शोध-चर्चा से मिलने वाले प्रमाणों ने किसी समय भारत के अन्य आठ स्थानों पर कुम्भ लगने की बात की भी पुष्टि कर दी। ग्रहों की विशिष्ट स्थिति में कुम्भ का योग बनता है। इस आधार पर प्रति बारह वर्षों में ऐसा योग बनता है और शास्त्रों में प्राचीन काल में ऐसे 12 स्थानों पर कुम्भ की परंपरा का उल्लेख मिलता है। दक्षिण में तमिलनाडु के एक स्थान कुम्भकोणम में आज भी प्रति 12 वर्ष में कुम्भ लगने की परंपरा है। लेकिन उक्त 12 स्थानों की सही व्याख्या और परतंत्रता कालखंड ने हमें सत्य के अन्वेषण को प्रेरित नहीं किया। पूज्य स्वामी जी के नेतृत्व में अष्ट कुम्भों का अभियान लुप्त और सुप्त कुम्भों का नवांकुर खिलाता आगे बढ़ता चला।

स्वामीजी की प्रेरणा से समुद्र मंथन स्थली के रूप में सिमरियाधाम की पुर्नस्थापना के पश्चात अष्ट कुम्भस्थली बद्रीनाथधाम, जगन्नाथपुरी, द्वारिकापुरी, रामेश्वरम, कुरुक्षेत्र, गंगासागर, कुम्भकोणम होता हुआ माँ कामाख्या धाम भी पहुंचा। भारत के सांस्कृतिक मूल्यों और परंपराओं की जड़ें इतनी गहरी है कि थोड़े कालखंड के लिए वो भले ही सतह पर न दिखें लेकिन हमारी भाव-भूमि के तल पर उनके बीज अवश्य ही संरक्षित रहते हैं। उन पावन विचारों को किसी दिव्य दृष्टि युक्त ऋषि-संत की प्रेरणा-संरक्षण और धर्मप्राण जनता का सहयोग मिले तो ये बीज फिर से अंकुरित होने लगते हैं। अष्ट पावन स्थानों और आदि कुम्भस्थली सिमरियाधाम का पुनर्जागरण इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

महाकुम्भ और 'स्व' आधारित सांस्कृतिक अर्थ तंत्र

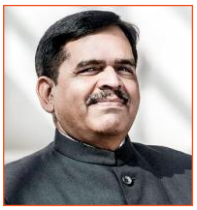

डॉ. अश्विनी महाजन
पूर्व प्रोफेसर
पीजीडीएवी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

मेला तंत्र में हजारों की संख्या में छोटे-छोटे स्तर पर काम करने वाले लोगों द्वारा भारत का घरेलू अर्थ तंत्र समृद्ध होगा जिसमें पूजा-पाठ से सम्बंधित सामग्री, धार्मिक पुस्तकें, धार्मिक परिधान, भोजन और खाने-पीने का सामान, कलाकृतियां, हस्तशिल्प, परिवहन और अन्य बहुत सी गतिविधियां सम्मिलित हैं। इन सभी गतिविधियों से भारत के लघु उद्योग से सम्बंधित मध्यम वर्ग जुड़ा है, यह मेला उन सबके जीवन को जहां आध्यात्मिक रूप से समृद्ध करेगा वहीं उनकी भौतिक समृद्धि के द्वार भी खोलेगा।

उत्तर प्रदेश के प्रयागराज में हर 12 वर्ष में एक बार लगने वाला कुम्भ मेला प्रारंभ हो चुका है। 13 जनवरी से शुरू यह कुम्भ मेला (इस बार विशिष्ट ग्रह दशाओं के चलते 'महाकुम्भ') 2025 एक भव्य आध्यात्मिक ही नहीं, अपनी विशालता और श्रद्धालुओं की संख्या को देखते हुए, दुनिया भर के लिए एक अद्भुत आयोजन भी है। यह पवित्र समागम सदियों पुरानी सनातन परंपराओं और भारत की सांस्कृतिक भव्यता को भी दर्शाता है।

इस त्योहार की उत्पत्ति हिन्दू पौराणिक देवासुर संग्राम और समुद्र मंथन की कथा में निहित है। देवताओं और असुरों द्वारा समुद्र मंथन से जो अमृत निकला था, उसे लेकर जब देवताओं और असुरों के बीच संघर्ष हुआ, तो अमृत की चार बूंदें भारत के चार स्थानों पर गिरीं: प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक। तभी से ये स्थल कुम्भ मेले के पवित्र स्थल बन गए, जहां भक्त पवित्र नदियों के तट पर आध्यात्मिक मुक्ति से सम्बंधित रीति-रिवाजों और संतों के दर्शन और विमर्श चर्चा के लिए एकत्र होते हैं।

कुम्भ मेले में बारंबार स्नान का विशेष महत्व है। माना जाता है कि गंगा, यमुना और पौराणिक सरस्वती नदियों के संगम पर स्नान करने से पाप धुल जाते हैं और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

महत्वपूर्ण बात यह है कि यह दुनिया का सबसे बड़ा समागम है, जिसमें लगभग 45 करोड़ श्रद्धालुओं के भाग लेने का अनुमान है। यह मेला आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पर्व होने के साथ ही एक अद्भुत अर्थ तंत्र भी है। प्रस्तुत लेख में इस महापर्व के आर्थिक पक्ष पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

जानकारों का मानना है कि 46 दिन चलने वाला महाकुम्भ मेला देश की जीडीपी में 1 प्रतिशत तक की वृद्धि कर सकता है। प्रदेश की जीडीपी में तो उससे कहीं ज्यादा वृद्धि हो सकती है। हालांकि उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ की गणना के अनुसार, महाकुम्भ में अपेक्षित 40–45 करोड़ लोग लगभग 5 हजार रुपये प्रति व्यक्ति के हिसाब से खर्च करें तो इससे लगभग 2 लाख करोड़ रुपये का आर्थिक प्रभाव होगा। लेकिन कुछ अन्य लोगों का मानना है कि प्रति व्यक्ति खर्च 10 हजार रुपये तक हो सकता है, जिसका मतलब है कि 4 लाख करोड़ रुपये का आर्थिक प्रभाव।

यह गणना बिना आधार के नहीं है। योगी आदित्यनाथ ने कहा कि वर्ष 2019 के कुम्भ ने 1.2 लाख करोड़ रुपये की अतिरिक्त जीडीपी का सृजन किया था। इस मेले में 24 करोड़ लोगों ने भाग लिया था, जो 2013 के मेले से दोगुना था। इस प्रकार से अनुमान लगाया जा सकता है कि इस बार 40 करोड़ लोगों की अपेक्षित भागीदारी के चलते 4 लाख करोड़ रुपये का आर्थिक प्रभाव, अस्वाभाविक नहीं है।

सरकार द्वारा इस मेले में 7500 करोड़ रुपया खर्च किया जाना है, जिसमें राज्य सरकार का हिस्सा 5400 करोड़ और केंद्र सरकार का हिस्सा 2100 करोड़ रुपये का है। योगी आदित्यनाथ का यह भी कहना है कि यह दुनिया का सबसे बड़ा अस्थायी शहर है। कुम्भ मेला, एक विशाल हिन्दू तीर्थयात्रा और त्योहार है, जिसे 2017 में यूनेस्को द्वारा मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की प्रतिनिधि सूची मे अंकित किया गया था। यह मान्यता एक अद्वितीय और अमूल्य सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के रूप में त्योहार के महत्व को उजागर करती है, जो भारत की समृद्ध आध्यात्मिक परंपराओं को प्रदर्शित करती है और विविध समुदायों के बीच एकता को बढ़ावा देती है।

ध्यातव्य है कि बिना किसी बड़ी बाधा के कुम्भ का मेला हजारों वर्षों से आयोजित होता आ रहा है। हालांकि, 2019 कुम्भ की व्यवस्थाएं भी कमतर नहीं थीं और 2017 के यूनेस्को द्वारा कुम्भ को दी गई मान्यता के अनुरूप ही थीं; जिससे भारत की अद्वितीय स्तर पर आयोजन की क्षमता का प्रदर्शन हुआ। महाकुम्भ 2025 की व्यवस्थाएं एक अलग स्तर और पैमाने पर एक प्रबंधकीय चमत्कार को दर्शाती हैं। सुरक्षित और

व्यवस्थित स्नान के लिए 8 नए घाट जोड़े गए हैं। भीड़-भाड़ से बचने के लिए उन्नत भीड़ प्रबंधन तकनीक, बेहतर परिवहन, बुनियादी ढांचा और कई अन्य व्यवस्थाएं की गई हैं। हम देखते हैं कि विशाल स्वच्छता व्यवस्था, पेयजल, सुविधाएं, सौर ऊर्जा संचालित प्रकाश व्यवस्था और आरामदायक आश्रय कुछ उल्लेखनीय व्यवस्थाएं हैं। यह सब कार्य करने में भी विभिन्न आर्थिक गतिविधियों और अर्थ का संवहन हुआ है। अनेक स्थानीय, प्रदेशीय और राष्ट्रीय स्तर के आर्थिक आदान-प्रदान इस व्यवस्थाओं को निर्मित करने में हुए हैं जिससे बड़ा आर्थिक प्रवाह हुआ है।

महाकुम्भ 2025 के प्रबंधन में प्रौद्योगिकी की भी अहम भूमिका होने की उम्मीद है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) संचालित और ड्रोन द्वारा समर्थित भीड़ नियंत्रण प्रणाली और समर्पित मोबाइल ऐप-मार्गों, घाटों के समय, मौसम अपडेट और आपातकालीन सेवाओं पर वास्तविक समय की जानकारी प्रदान कर रहे हैं। डिजिटल भारत की परिकल्पना में डिजिटल वर्ल्ड के अर्थ तंत्र को भी इस महाकुम्भ ने आत्मसात् किया है। करोड़ों रुपये डिजिटल तकनीक एवं **AI** तकनीक की व्यवस्था में चक्रित हुए हैं जिससे इनसे जुड़े व्यवसायियों, तकनीशियनों, श्रमिकों और उद्योगों के अर्थ तंत्र को मजबूती मिली है। महाकुम्भ 2025 में हरित पहल शून्य अपशिष्ट नीति द्वारा निर्देशित है। व्यापक रीसाइकिलिंग सिस्टम और खाद बनाने की सुविधाएं, बायोडिग्रेडेबल विकल्पों के उपयोग के साथ प्लास्टिक का प्रतिबंधित उपयोग, गंगा और यमुना की पवित्रता सुनिश्चित करने हेतु उन्नत जल उपचार संयंत्र और निगरानी प्रणाली, जल प्रतिधारण और मिट्टी के कटाव को कम करने के लिए बड़े पैमाने पर वनरोपण आदि उल्लेखनीय कार्य भी ऐसे हैं जो 'सस्टेनेबल लाइफ नेटवर्क एंड सिस्टम' का उत्तम उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। सौर ऊर्जा पैनल और जैव-ऊर्जा प्रणाली जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत मेला व्यवस्थाओं को ऊर्जा प्रदान करेंगे। 10,000 सीसीटीवी कैमरे, एआई समर्थित चेहरे की पहचान तकनीक, सुरक्षा और आपदा के लिए बड़ी टीमों के साथ प्रतिक्रिया विशेष रूप से उल्लेखनीय व्यवस्थाएं हैं।

यह सब भारत के स्थानीय एवं प्रादेशिक स्तर के कुटीर उद्योगों और आत्मनिर्भर भारत के संकल्प को पूरा करने वाले हजारों स्टार्टअप प्रोग्राम को सक्षम करेगा। इसके साथ ही मेला तंत्र में हजारों की संख्या में छोटे-छोटे स्तर पर काम करने वाले लोगों द्वारा भी भारत का घरेलू अर्थ तंत्र समृद्ध होगा जिसमें पूजा-पाठ से सम्बंधित सामग्री, धार्मिक पुस्तकें, धार्मिक परिधान, भोजन और खाने-पीने का सामान, कलाकृतियां, हस्तशिल्प, परिवहन और अन्य बहुत सी गतिविधियां सम्मिलित हैं। इन सभी गतिविधियों से भारत के लघु उद्योग से सम्बंधित मध्यम वर्ग जुड़ा है, यह मेला उन सबके जीवन को जहां आध्यात्मिक रूप से समृद्ध करेगा वहीं उनकी भौतिक समृद्धि के द्वार भी खोलेगा। सरकार के द्वारा भी इस बार ऐसी व्यवस्था बनाई गयी हैं जिससे भारत के सांस्कृतिक अर्थ तंत्र को भी इस मेले के माध्यम से न केवल पहचान मिले बल्कि उसे गति भी मिले जिससे भारत स्व-आधारित अर्थ तंत्र के अपने लक्ष्य को अर्जित करने की दिशा में बढ़े। मेलों से जुडी अनेक व्यवस्थाएं शत-प्रतिशत स्वदेशी हैं, यह इतने विराट आयोजन की दृष्टि से आत्मनिर्भर भारत की सामर्थ्य को दर्शाता है।

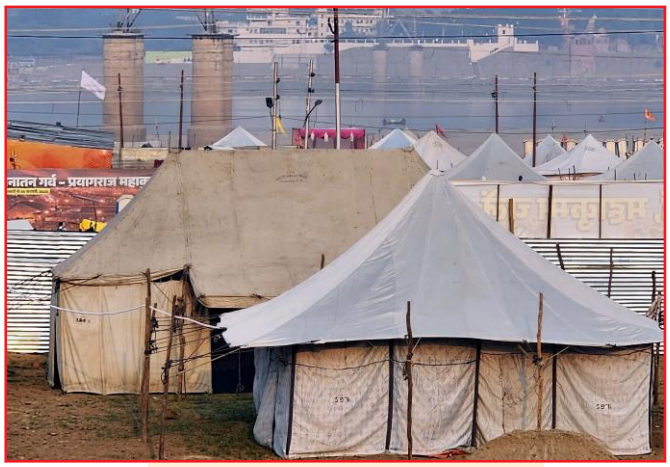

डिजिटल भारत की परिकल्पना में डिजिटल वर्ल्ड के अर्थ तंत्र को भी इस महाकुम्भ ने आत्मसात् किया है। करोड़ों रुपये डिजिटल तकनीक एवं AI तकनीक की व्यवस्था में चक्रित हुए हैं जिससे इनसे जुड़े व्यवसायियों, तकनीशियनों, श्रमिकों और उद्योगों के अर्थ तंत्र को मजबूती मिली है।

कहा जा सकता है कि श्रद्धालु, अमृत काल में आयोजित हो रहे महाकुम्भ 2025 में पवित्र संगम के जल में डुबकी लगाते हुए, आराम और सुरक्षा तथा स्वच्छता और गहन आध्यात्मिक अनुभूति का अनूठा अनुभव कर रहे हैं। इस प्रकार के आयोजन सिद्ध करते हैं कि हमारे पूर्वजों ने मंदिरों, नदियों और तीर्थों का जो तंत्र विकसित किया वह मनुष्य को मुक्ति दिलाने के साथ ही उसकी आध्यात्मिक उन्नति का अद्भुत प्रबंधन है और इसी प्रबंधन में जीवन के लिए अति आवश्यक अर्थ तंत्र को भी उन्होंने बड़ी कुशलता से स्थापित किया जिससे हमारी धर्मनिष्ठ आर्थिक सामर्थ्य विकसित हुई। निश्चित रूप से ऐसे विराट आयोजन हमारी सांस्कृतिक विरासत का संवर्धन करते हुए हमें आर्थिक रूप से भी समर्थ एवं उन्नत राष्ट्र बनने की दिशा में ले जाने वाले हैं। 'स्व' आधारित अपने परम्परागत प्रबंधन को आधुनिक तकनीकी और नवीन ज्ञान-विज्ञान के साथ कुशलतापूर्वक प्रयोग कर हम भारत को विकसित भारत के लक्ष्य की ओर ले जाने के संकल्प के साथ समृद्धि की ओर अग्रसर होंगे।

भारतीय संचार परंपरा का उत्सव है कुम्भ

साथ मिलना-बैठना, संवाद करना और लोक विमर्श से बनी है महान परंपरा

प्रो. संजय द्विवेदी
पूर्व महानिदेशक, आईआईएमसी

एक समय था जब हमारे पास संवाद के, संचार के आधुनिक माध्यम नहीं थे। मीडिया या पत्रकारिता नहीं थी। किंतु समाज था, लोग थे, विविध भाषाएं थीं। संवाद, संचार और शास्त्रार्थ जैसे शब्द भी थे। ये आधुनिक शब्द नहीं हैं। यानी तब भी समाज में जीवंत संचार परंपरा थी। जिसने सारे राष्ट्र को जोड़ कर रखा था।

कुम्भ भारतीय संचार और ज्ञान परंपरा का एक ऐसा उत्सव है, जिससे 'भारत' को जानने की समझ मिलती है। आंखें मिलती हैं। नई रोशनी मिलती है। भारत जैसे विशाल देश, उसकी संस्कृति, संत परंपरा का यह महा उत्सव है। स्वयं को जानना, भारत को जानना, भारत के धर्म और उसकी विविध ज्ञान धाराएं और ज्ञान परंपरा का अवगाहन करने का उत्सव है कुम्भ। यह भारत की अद्भुत संचार परंपरा का भी केंद्र है। सामान्य जन से लेकर देश के प्रबुद्धजनों का न सिर्फ यहां आगमन होता है, बल्कि यहां से मिले संदेश को वे देश भर में लेकर जाते हैं। यह संवाद, संदेश और एकत्व का सृजन विशेष है। दुनिया भर के मनुष्य एक हैं और वे एक ही भावबोध से बंधे हुए हैं यह विचार यहां हमें मिलता है। भारत का 'सर्वे भवंतु सुखिनः' का विचार इसके मूल में हैं। जो सामान्यजन को शक्ति देता है। यहां से प्राप्त विचार हमें जीवन युद्ध में खड़े और डटे रहने का हौंसला देते हैं। यह सामान्य संवाद क्षण नहीं है, विमर्श का भी उत्सव है।

भारत की संवाद और संचार परंपरा से ही यह राष्ट्र सांस्कृतिक रूप से एक रहा है। इसलिए कहते हैं इस राष्ट्र में राज्य अनेक थे, राजा अनेक थे किंतु राष्ट्र एक था। राष्ट्र को जोड़ने वाली शक्ति ही संस्कृति है। इसलिए विष्णु पुराण में हमारे ऋषि कह पाए-

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्षं तद् भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः॥

इस सांस्कृतिक एकता को बनाए रखने के लिए संवाद सबसे जरूरी तत्व था। जिससे सम भाव, मम भाव और समानुभूति पैदा होती है। उत्तर से दक्षिण तक, पूर्व से पश्चिम तक समूचा भारत एक भाव से जुड़े और सोचे इसके लिए ऐसे आयोजन जरूरी हैं जो एकत्व के सूत्र को मजबूत कर सकें। कुम्भ एक ऐसा ही आयोजन है जिसमें समूचा भारत एक साथ आकर अपने सामयिक संदर्भों, जीवन संदर्भों, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संदर्भों पर विचार करता है। हमारी संत परंपरा, ऋषि परंपरा के नायक हमें संवाद के वे सूत्र देते हैं जिनसे

हमारा आगे का जीवन समर्थ होता है। संवाद परंपरा की यह उजली परिपाटी आज भी बनी हुई है। एक समय था जब हमारे पास संवाद के, संचार के आधुनिक माध्यम नहीं थे। मीडिया या पत्रकारिता नहीं थी। किंतु समाज था, लोग थे, विविध भाषाएं थीं। संवाद, संचार और शास्त्रार्थ जैसे शब्द भी थे। ये आधुनिक शब्द नहीं हैं। यानी तब भी समाज में जीवंत संचार परंपरा थी। जिसने सारे राष्ट्र को जोड़ रखा था। राजा राज्यों को बनाते होंगें, किंतु भारत राष्ट्र को ऋषियों ने रचा है। इसलिए यह राष्ट्र चिरंतन है। एक साथ नया और पुराना दोनों है। इसलिए भारत राष्ट्र को एक ओर जीता जागता राष्ट्रपुरुष कहा गया तो दूसरी ओर भारतमाता कहकर इससे आत्मीयता का संबंध भी बनाया गया। 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।' यह मंत्र इसी भाव की सार्थक अभिव्यक्ति है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में विमर्श का सबसे बड़ा मंच कुम्भ ही है। यहां होने वाले विमर्श और चर्चाएं सारे भारत के गिरिवासियों, नगरवासियों, ग्रामवासियों और वनवासियों तक पहुंचती रही हैं। संवाद और संचार की यह परंपरा कितनी वैज्ञानिक रही होगी कि यहां होने वाली चर्चाओं का समूचा संदेश उसी रूप में बिना विकृत हुए आमजन तक पहुंचता रहा है। जबकि आधुनिक संचार माध्यमों से प्रसारित संदेश- ग्रहणशीलता के कई तल हैं। भारत की संचार परंपरा वास्तव में श्रुति और स्मृति परंपरा से ही आकार लेती है। जिसका उद्देश्य ही लोकमंगल है। लोककल्याण भारत की चिति है। इससे कम और ज्यादा कुछ नहीं। हमारे शास्त्र कई रूपों में इसकी घोषणा करते हैं। भारत के पर्व, उत्सव, मेले, प्रवचन, प्रदर्शन कलाएं, लोक कलाएं, संगीत, साहित्य, योग, आयुर्वेद सब लोकमंगल में ही अपनी मुक्ति खोजते हैं। कुंभ मेला इन अभिव्यक्तिजन्य कलाओं का सामूहिक मंच रहा है। ये सभी अनुशासन अपना स्थान पाते रहे हैं। भारत में मनुर्भव की संस्कृति को अपने समूचे लोकजीवन में स्थापित किया। इसलिए 'सर्वभूत हिते रताः' का भाव पूरे भारत के मन पर अंकित हो गया।

भारत की सांस्कृतिक यात्रा में कुंभ के महत्व को इस बात से समझा जा सकता है कि विविधता भरे भारत की सांस्कृतिक थाती और विरासत को बनाने, बचाने और संवाद में रखने का काम भी ऐसे महान आयोजनों ने किया है। ज्ञान को अमृत मानकर इसके रसास्वादन की परंपरा का उत्कर्ष ही कुम्भ है। यह काम दुनिया में भारत ही कर सकता है। क्योंकि वह ज्ञान में ही रत है यानी 'भा-रत' है। संचार के सभी प्रकारों का कुम्भ में प्रकटीकरण होता है। इन अर्थों में यह सभा आध्यात्मिक शुद्धि के विचारों से कहीं आगे है, जिसमें संपूर्ण जीवन का विचार है। आध्यात्मिक यात्रा के साथ-साथ विविध जीवनानुभवों का साक्षी बनकर व्यक्ति भारत की सांस्कृतिक यात्रा से भी जुड़ जाता है। भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय द्वारा जारी विवरण में कहा गया है कि- "वर्ष 2025 का महाकुंभ मेला सिर्फ एक सभा नहीं है; यह स्वयं की ओर एक यात्रा है। अनुष्ठानों और प्रतीकात्मक कृत्यों से परे, यह तीर्थयात्रियों को आंतरिक प्रतिबिंब और परमात्मा के साथ गहरे संबंध का अवसर प्रदान करता है। आधुनिक जीवन की माँगों पर अकसर हावी रहने वाली दुनिया में, महाकुंभ मेला एकता, पवित्रता और ज्ञानोदय के प्रतीक के रूप में खड़ा है। यह कालातीत तीर्थयात्रा शक्तिशाली अनुस्मारक के रूप में कार्य करती है कि मानवता के विभिन्न मार्गों के बावजूद, हम मूल रूप से शांति, आत्म-बोध और पवित्रता के प्रति स्थायी श्रद्धा की ओर एक साझा यात्रा के लिए एकजुट हैं।"

ज्ञान को अमृत मानकर इसके रसास्वादन की परंपरा का उत्कर्ष ही कुम्भ है। यह काम दुनिया में भारत ही कर सकता है। क्योंकि वह ज्ञान में रत है यानी 'भा-रत' है। संचार के सभी प्रकारों का कुम्भ में प्रकटीकरण होता है। इन अर्थों में यह सभा आध्यात्मिक शुद्धि के विचारों से कहीं आगे है, जिसमें संपूर्ण जीवन का विचार है।

कुम्भ यानी साथ मिलना-बैठना, संवाद करना। लोक विमर्श से बनी इस महान परंपरा का महत्व आधुनिक युग में भी कम नहीं हुआ है। आज के समय में जब समूची दुनिया में संघर्ष, हिंसा और प्रतियोगिता के लिए दूसरे को कुचल डालने के षड़यंत्र आम हैं। भारत ने संवाद और शास्त्रार्थ के माध्यम से संकटों का हल निकालने की परिपाटी विकसित की है। जहां हिंसा का कोई स्थान नहीं है। संवाद न होने से ही ज्यादातर संकट खड़े होते हैं। संवाद की दुनिया इसका एकमात्र विकल्प है। एक ही देश से अलग होकर बने दो देशों में भी संवाद नहीं है। रूस-यूक्रेन, भारत-पाकिस्तान-बंगलादेश इसके उदाहरण हैं। इसका एकमात्र कारण है कि हमने लोकमंगल और संवाद का विचार त्याग दिया है। संवाद न होने से राज्य-राज्य, व्यक्ति-व्यक्ति, समाज-समाज टकरा रहे हैं। कुम्भ का विचार आध्यात्म, ज्ञान और संवाद तीनों की त्रिवेणी है। कुम्भ विश्व मानवता के सुमंगल का विचार करने का केंद्र भी है। मानवता के सम्मुख चुनौतियां हम सबकी हैं। समूचे विश्व की हैं। आध्यात्म जहां हमें समष्टि से जोड़ता है वहीं संवाद हमें आपस में जोड़ता है। कुम्भ भारतबोध का भी उत्सव है। यह हमें बताता है कि भारत क्या है? यहां आप भारत को महसूस कर सकते हैं। आज जब मानवता के सामने संकट के बादल छाए हुए हैं, ऐसे चुनौतीपूर्ण समय में कुम्भ का आयोजन सही मायने में बहुत प्रासंगिक है। इसके आयोजन से विश्व मानवता आपस में जुड़ती है, संवादित होती है और लोकमंगल के संकल्प प्रखर होते हैं। उम्मीद की जानी चाहिए कि भारत की संचार और संवाद परंपरा का अनुगमन कर समूचा विश्व अपने संकटों का ठोस समाधान खोज सकेगा।

मोनिका चौहान
स्वतंत्र टिप्पणीकार

सामाजिक समरसता का प्रतीक कुम्भ पर्व

प्रत्येक 12 वर्षों में आयोजित होने वाला पूर्ण कुम्भ भारतीय संस्कृति, आस्था और सामाजिक समरसता का एक अनोखा पर्व है। यह केवल एक धार्मिक आयोजन मात्र नहीं है, बल्कि यह भारतीय समाज की विविधता में निहित एकात्म शक्ति का जीवंत उदाहरण भी है। 12 पूर्ण कुम्भों के पश्चात 2025 में महाकुम्भ का आयोजन हो रहा है।

कुम्भ का पौराणिक और सामाजिक महत्व : कुम्भ की जड़ें पौराणिक कथाओं में हैं। समुद्र मंथन की कथा के अनुसार, अमृत के कलश के लिए देवताओं और असुरों के बीच संघर्ष हुआ था। इस दौरान अमृत की कुछ बूंदें पृथ्वी पर चार स्थानों - प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक पर गिरीं। इन्हीं स्थानों पर कुम्भ का आयोजन होता है। इसका धार्मिक उद्देश्य आत्मा की शुद्धि और मोक्ष प्राप्त करना है।

कुम्भ : विविधता में एकता का पर्व : कुम्भ भारतीय समाज की 'विविधता में एकता' की भावना को साकार करता है। यह पर्व यह दर्शाता है कि भले ही समाज में भिन्न भाषाएं-भूषाएं, संस्कृतियां, परंपराएं और पंथ-समुदाय हों, लेकिन आस्था और मानवीय मूल्यों की डोर सभी को जोड़ती है।

समानता का भाव : कुम्भ में हर वर्ग के लोग, चाहे वे गरीब हों या अमीर, एक साथ स्नान करते हैं। यहां जाति, धर्म, वर्ग और क्षेत्र का कोई भेदभाव नहीं होता। इस प्रकार यह आयोजन समानता का आदर्श प्रस्तुत करता है।

संतों और अखाड़ों की भूमिका : कुम्भ के दौरान 13 प्रमुख अखाड़े, जो विभिन्न परंपराओं और धार्मिक संप्रदायों का प्रतिनिधित्व करते हैं, एकत्र होते हैं। इनके आपसी संवाद और सहयोग धार्मिक समरसता का संदेश देते हैं।

क्षेत्रीय संस्कृतियों का संगम : कुम्भ में विभिन्न प्रांतों और देशों से श्रद्धालु आते हैं। यह आयोजन भारत की सांस्कृतिक विविधता को प्रदर्शित करता है और सांस्कृतिक सहिष्णुता का अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत करता है।

वसुधैव कुटुंबकम् की भावना : कुम्भ में न केवल भारत के कोने-कोने से, बल्कि विदेशों से भी लाखों लोग आते हैं। यह आयोजन 'वसुधैव कुटुंबकम्' यानी 'सारा विश्व एक परिवार है' की भावना को साकार करता है।

सामाजिक समरसता के आदर्श सामूहिक स्नान : संगम या अन्य पवित्र नदियों में सामूहिक स्नान के दौरान जाति और वर्ग का भेद मिट जाता है। यह एक ऐसा क्षण होता है, जब हर व्यक्ति केवल एक श्रद्धालु के रूप में नदियों के पवित्र जल में स्नान करता है।

स्वयंसेवा का महत्व : कुम्भ में सेवा और सामूहिक सहयोग का भाव एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हजारों स्वयंसेवक और संगठनों द्वारा निःस्वार्थ सेवा कार्य किए जाते हैं।

धार्मिक और आध्यात्मिक प्रवचन : कुम्भ के दौरान संतों और धार्मिक विद्वानों द्वारा प्रवचन आयोजित किए जाते हैं। ये प्रवचन न केवल धार्मिक, बल्कि सामाजिक मूल्यों का महत्व भी सिखाते हैं।

सांस्कृतिक और आध्यात्मिक संवाद : कुम्भ में विभिन्न संस्कृतियों का आदान-प्रदान होता है। यहां लोक संगीत, नृत्य, कला प्रदर्शनियां और सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं, जो सांस्कृतिक संवाद का साधन बनते हैं।

कुम्भ का वैश्विक महत्व : कुम्भ विश्वभर के श्रद्धालुओं और पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र है। लाखों विदेशी पर्यटक कुम्भ में शामिल होकर भारतीय संस्कृति और परंपराओं का अनुभव करते हैं। यह आयोजन भारतीय परंपराओं और सांस्कृतिक धरोहर को विश्व पटल पर प्रस्तुत करता है।

कुम्भ सामाजिक समरसता, एकता और सहयोग का पर्व है। जो आस्था, श्रद्धा और समानता के आदर्शों को जीवंत करता है। कुम्भ की परंपरा 'सर्वधर्म समभाव' और 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना का प्रतीक है। यह पर्व न केवल भारतीय समाज के लिए, बल्कि पूरे विश्व के लिए एकता और समरसता का आदर्श प्रस्तुत करता है। ■

वो क्या जानेंगे महाकुम्भ का रहस्य

नरेन्द्र भदौरिया
वरिष्ठ पत्रकार

सनातन संस्कृति का साहित्य चुराकर ही पाश्चात्य संस्कृति के लोगों ने अपनी सोच विकसित की है। भारत से द्वेष के कारण उनका विनाश सुनिश्चित है। भारतीय संस्कृति अपने शाश्वत सिद्धान्तों के कारण अमर है। नया युग भारतीय संस्कृति के चरमोत्कर्ष का सिद्ध होगा। भारत एक बार पुन: विज्ञान, व्यापार, शौर्य और नेतृत्व की विलक्षण शक्तियों के साथ शिखर पर पहुंचेगा।

प्रयागराज महाकुम्भ में सृष्टि की सबसे प्राचीन सनातन संस्कृति का धवल इतिहास नयी लेखनी से लिखा जा रहा है। भारत की पूर्ण संस्कृति को लम्पट क्या समझेंगे। यह कहते हुए तनिक क्षुब्ध होकर मेधा और वय दोनों से परिपक्व 83 वर्षीय एक बुजुर्ग ने कहा- भारतीय तपश्चर्या और त्याग की महिमा से परिपूर्ण भारतीय चिन्तन धारा को सांसारिकता में आकण्ठ डूबे लम्पट सोच के लोग देखना, समझना तो दूर तनिक अनुभव भी नहीं कर पाते। इन बुजुर्ग का नाम मिहिर है। इनकी संगिनी ने संस्कृत और हिन्दी के साथ भारत की पांच भाषाओं और 10 से अधिक बोलियों को पति की संगति और भारत के लम्बे भ्रमण से सीखा है।

मिहिर की संगिनी मालिनी वास्तव में भारतीय मूल की हैं। उनके पूर्वज कई पीढ़ी पहले बल पूर्वक अफ्रीका ले जाये गये थे। मिहिर और मालिनी दोनों के पूर्वजों का मूल स्थान बिहार में था। अफ्रीका से तीन बार भारत आकर अपने पूर्वजों के मूल गांव को खोजने में वे सफल हुए। उनका कहना है कि प्राचीन नालंदा के पास उनका एक छोटा गांव था। वहां के लोग पहले पूर्वी उत्तर प्रदेश के बलिया जिले में बसे फिर दिल्ली तथा हरियाणा में फैल गये। ऐसे वंशजों में कुछ को साथ लेकर इस बार वह महाकुम्भ में कल्पवास करने आये हैं। मिहिर का जीवन बहु आयामी है। वह विज्ञान के क्षेत्र में काम कर चुके हैं। अब साहित्यिक और हिन्दु संस्कृति में गहरी अभिरुचि के कारण बार-बार भारत आते हैं।

मिहिर और मालिनी ने बहुत बार अनुनय करने पर भी अपनी जाति नहीं बतायी। मिहिर की परिणिता मालिनी कहती हैं कि सनातनी की पहचान कर्म से होती रही है। जिन्हें आज लोग जाति कहते हैं वह उनका अध्यवसाय हुआ करता था। इस संस्कृति में तो जन्मे शिशु का केवल गोत्र तय होता है, जाति नहीं। मिहिर ने हौले से धर्मज्ञ भार्या की ओर निहारा तो वह मौन हो गयीं। मिहिर ने कहा- बन्धु सनातन संस्कृति का सूरज करवट ले रहा है। आगामी युग नारायणी सेना के अभ्युदय का होगा। आज लोग नहीं समझेंगे। यह संस्कृति युगीन झंझावातों को चीरती हुई सदा उछाल मारती रही है। इस महाकुम्भ का अमृत पान करके सूर्य की किरणें अपना परिधान बदलने वाली हैं। विश्व चकित रह जाएगा। संसार की नाविन्य पीढ़ियों को अर्वाचीन शाश्वत धर्म की शक्ति अपनी ओर आकृष्ट कर लेगी।

वह कहने लगे कि धर्म की वास्तविकता को भुलाने वाले चाहे कोठियों में निरुद्ध भोगी वृत्ति के समूह हों अथवा कबीलाई झुण्डों के संघर्षरत असंख्य मानव, सभी को नया सवेरा जगाने आ रहा है। मिहिर और मालिनी एक आश्रम में उन 72 लोगों के साथ ठहरे हैं जो विभिन्न देशों से यहां आये हैं। कहते हैं उनके जीवन को विस्तार मिल गया है। इस बात को आप नहीं समझेंगे। इतना कह कर वह तनिक मुस्कुराए फिर मेरे कन्धे पर हथेली टिकाकर कहा- मेरी ओर देखो। मैंने अनुभव किया कि

उनके नेत्रों में ऐसा कुछ था कि मेरी नेत्र ज्योति टिकी नहीं रह सकी। निश्चय ही यह उनका आत्म विश्वास था। तभी मिहिर के एक साथी ने आकर धीरे से कहा- गुरुजी संध्या वन्दन से उठ गये होंगे। उनके प्रवचन का समय हो गया है। मिहिर ने मुझसे कहा- चलने दीजिए। वह पलट कर गति बढ़ाकर ओझल हो गये। मालिनी और मिहिर किस शक्ति पुंज को गुरु मानते हैं। इस जिज्ञासा ने मेरे साथ कुम्भ की गलियों में भ्रमण कर रहे पांचों साथियों के पांवों की दिशा मोड़ दी। कुछ ने चाहा कि इनका पीछा करना चाहिए। जो कुछ बोल रहे थे मुझे भी रुचिर लग रहा था। किन्तु यह जान कर मैंने पीछा नहीं किया कि अपने गुरु के सानिध्य में उन्हें एकान्त की आवश्यकता है।

इस बार प्रयागराज का कुम्भ बहुत अनूठा है। इस महाकुम्भ का व्यवस्था पक्ष इसे अविस्मरणीय बना रहा है। भ्रमण के दौरान मेला क्षेत्र में सतर्कता देखकर हम प्रसन्न थे। गुप्तचर सेवा के एक अधिकारी ने बिना नाम खोले बताया कि यह महाकुम्भ पूरे संसार के लिए एक अचरज है। जब बहुत से अच्छे लोग एक स्थान पर एकत्रित हों तो असुर वृत्ति के लोगों को बेचैनी होती है। कुम्भ के अमृत को पाने के लिए सुर और असुर दोनों दौड़ पड़े थे। आज तक यह दौड़ चली आ रही है। इसलिए हमारे महाराज जी का स्पष्ट मत है कि असुर वृत्ति के लोगों पर कड़ी निगरानी रखी जाय। यह सारी सतर्कता इसी उद्देश्य से है।

56 वर्ष के बाबा सूर्यानन्द ओडिसा से आये हैं, वह गणित के प्रोफेसर का पद त्याग कर संन्यासी बन गये हैं। प्रयागराज के महात्म्य की जितनी बातें उन्होंने पढ़ी और सुनी हैं वह सब सत्य हैं। उनके 90 वर्षीय गुरु स्वामी जगन्नाथ दास भी साथ आये हैं। सूर्यानन्द जी ने बताया कि गुरु महाराज बताते हैं कि सनातन संस्कृति का साहित्य चुराकर ही पाश्चात्य संस्कृति के लोगों ने अपनी सोच विकसित की है। भारत से द्वेष के कारण उनका विनाश सुनिश्चित है। भारतीय संस्कृति

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और उससे जुड़ी कई संस्थाएं मेला क्षेत्र में भोजन, चिकित्सा सहित श्रद्धालुओं के लिए हर प्रकार का सहयोग करने में सक्रिय हैं। संघ के स्वयंसेवकों के जत्थे जिस तत्परता से सेवा कार्यों में लगे हैं वह इस संगठन की श्रेष्ठता को दर्शाता है।

अपने शाश्वत सिद्धान्तों के कारण अमर है। नया युग भारतीय संस्कृति के चरमोत्कर्ष का सिद्ध होगा। भारत एक बार पुनः विज्ञान, व्यापार, शौर्य और नेतृत्व की विलक्षण शक्तियों के साथ शिखर पर पहुंचेगा।

कुम्भ मेले का सबसे आकर्षक पक्ष है साधु-संतों और योगियों का दर्शन। निन्दक वृत्ति के लोगों को साधुओं के चमत्कार आदि अनूठे कृत्य भारतीय संस्कृति को पिछड़ा हुआ बताने का मसाला लगते हैं। पहले भी भारत को सपेरों, करतब करके पेट भरने वाले लोगों का देश कहने वालों की कमी नहीं रही। ऐसे निंदक महाकुम्भ की धरा पर पधारे देवतुल्य महापुरुषों, तत्वज्ञानियों तक पहुंचने का प्रयत्न ही नहीं करते।

यहां हिन्दु सन्त परम्परा के 13 प्रमुख अखाड़ों के सन्तों के 17 हजार से अधिक डेरे हैं। देशभर में हिन्दु संस्कृति से जुड़ा कोई मत, पन्थ, सम्प्रदाय ऐसा नहीं है जिसके श्रद्धालु यहां न आये हों।

साधु-सन्तों, बाबाओं, नागाओं के भांति-भांति के परिधान और उनकी शैली सभी को अपनी ओर आकर्षित करती है। साधु-सन्तों के प्रति हीन भावना रखने वाले लम्पट लोग श्रद्धा के इस महा-समागम को भला कैसे समझ सकते हैं? मुख्यमन्त्री योगी आदित्यनाथ मेले की व्यवस्थाओं की स्वयं निगरानी कर रहे हैं। महाकुम्भ के एक सेक्टर में 10 एकड़ में कलाग्राम बना है। देश की सांस्कृतिक विविधिता को प्रदर्शित करने वाले सात बड़े पण्डाल यहां सजे हुए हैं। भारत की महान पारम्परिक कलाओं के विश्व प्रसिद्ध 230 शिल्पकार अपनी कलाकृतियों के साथ उपस्थित हैं। यह मेला सचमुच इतना विलक्षण है कि इससे पहले किसी एक स्थान पर भारतीय संस्कृति का इतना विराट रूप कभी देखने को नहीं मिला। महाकुम्भ के डेरों के अतिरिक्त 10 लाख सामान्य श्रद्धालुओं के रुकने का प्रबन्ध किया जाना विलक्षण बात है। मेला क्षेत्र में दस हजार से अधिक स्वयंसेवी संस्थाओं ने श्रद्धालुओं के लिए भोजन और ठहरने के प्रबन्ध किये हैं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और उससे जुड़ी कई संस्थाएं मेला क्षेत्र में भोजन, चिकित्सा सहित श्रद्धालुओं के लिए हर प्रकार का सहयोग करने में सक्रिय हैं। संघ के स्वयंसेवकों के जत्थे जिस तत्परता से सेवा कार्यों में लगे हैं वह इस संगठन की श्रेष्ठता को दर्शाता है। भारत की अनूठी गुरु शिष्य परम्परा को यदि निकट से निहारना है तो अखाड़ों और संतों के डेरों में जाकर देखा जा सकता है।

पूरे मेला क्षेत्र में भारतीय संस्कृति के युगों से फहराने वाले ध्वज दर्शनीय बने हुए हैं। संस्कृति के गूढ़ विषयों की जैसी अनूठी प्रामाणिक व्याख्या यहां महान सन्तों और प्रवचनकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत की जा रही है, वह अन्यत्र कहीं सुलभ नहीं हो सकती। भारतीय समाज की त्याग वृत्ति के यदि दर्शन करने हों तो महाकुम्भ की धरा पर पधारना चाहिए। सामान्य जनमानस से लेकर धनी और उद्यमी भी यहां अपनी त्याग और दान की मनोवृत्ति से प्रभावित होकर भागे चले आ रहे हैं। आश्रमों में भण्डार सजे हैं। अखण्ड भण्डारे चल रहे हैं। सचमुच यह महाकुम्भ भारतीय संस्कृति की उदारता और विलक्षणता को एक नया विस्तार देकर जब विदा होगा तो आने वाले हजारों वर्षों तक इसकी स्मृति बनी रहेगी।

दशनामी अखाड़ा परंपरा और कुम्भ मेला

प्रो. (डॉ.) प्रवेश कुमार
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

कुम्भ मेले में दशनामी अखाड़ों की भागीदारी का एक और महत्वपूर्ण पहलू पारंपरिक अनुष्ठानों को बनाए रखने में उनकी भूमिका है, जो इस आयोजन की रीढ़ हैं। अखाड़े यह सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबद्ध हैं कि कुम्भ पर्व के अनुष्ठान अत्यंत पवित्रता और श्रद्धा के साथ किए जाएं। वे शुद्धिकरण संस्कार, शोभायात्रा, स्नान समारोह और प्रार्थना की देखरेख करते हैं। अखाड़ों को मेले की आध्यात्मिक और आनुष्ठानिक अखंडता के संरक्षक के रूप में देखा जाता है।

हमारी हिन्दू संस्कृति और इसकी विशालता और इस विशालता में विविधिता और इसी विविधिता में एकत्व तत्व जिसे हम हिन्दुत्व कहते हैं जिसने विविधता के साथ हमारी विशाल हिन्दू संस्कृति को समेटे रखा है। हमारे हिन्दू समाज के नित मनाये जाने वाले त्योहार, उत्सव एवं कुछ विशेष अवसरों पर मेलों का आयोजन होना यह सभी हमें हमारे मूल से जोड़ता है। ऐसे मेलों की कड़ी में कुम्भ मेला है जिसकी परंपरा हजारों वर्षों पुरानी है। यजुर्वेद एवं अथर्ववेद तथा पद्म पुराण में इसका वर्णन है, वहीं 6ठीं शताब्दी में चीनी लेखक ह्वेनसांग ने अपनी यात्रा वृत्तांत में भी कुम्भ का वर्णन किया है। वे लिखते हैं कि, "हर छठे साल में लोग गंगा में स्नान करने आते हैं, मेला होता है, राजा हर्षवर्धन द्वारा कुम्भ मेले की व्यवस्था आदि को लेकर भी उन्होंने लिखा है"। यह मेले भारत की सनातन हिन्दू संस्कृति का प्रदर्शन तो करते ही हैं साथ ही भाषा-बोली, खान-पान, वेष-भूषा की विविधिता के साथ एकात्म तत्व का दर्शन भी कराते हैं। कुम्भ मेलों को हम तीन क्रम में समझ सकते हैं। प्रत्येक 6 वर्ष के उपरांत अर्द्धकुम्भ आयोजित होता है प्रत्येक 12 वर्ष पूर्ण होने पर पूर्ण कुम्भ का आयोजन होता है जबकि 144 वर्ष अर्थात् 12 पूर्ण कुम्भ के पश्चात महाकुम्भ आयोजित होता है। जो केवल प्रयागराज में ही होता है। जबकि अर्द्धकुम्भ एवं पूर्ण कुम्भ क्रमशः हरिद्वार, उज्जैन, नासिक व प्रयागराज पर आयोजित होते हैं। यह एक संयोग है कि हम इस महाकुम्भ के साक्षी बनेंगे। शास्त्रों के अनुसार कुम्भ का अर्थ "अमृत कलश" से है।

हम सभी को विदित ही है कि हिन्दू धर्म के भीतर कितने सारे छोटे-बड़े मत, संप्रदाय हैं। सभी अपना मूल वैदिक सनातन हिन्दू संस्कृति को मानते हैं। इसलिए एकता में विविधिता का नाम ही हिन्दू है, भारत है। हमारी संस्कृति, हमारी विरासत "एकम् सत् विप्रा बहुदा वदन्ति" के दर्शन को मानती है। इसी दर्शन का पालन कुम्भ में होता है। आदि शंकराचार्य ने कुम्भ में "दशनामी अखाड़ा परम्परा" को प्रारम्भ किया। दशनामी अखाड़ा जिसमें संतों के विभिन्न अखाड़ों को सम्मलित किया गया (1) गिरी (2) पुरी (3) भारती (4) तीर्थ (5) वन (6) अरण्य (7) पर्वत (8) आश्रम (9) सागर (10) सरस्वती। इन सभी अखाड़ों को आदि शंकराचार्य ने चार प्रमुख पीठ से जोड़ा जिसमे (1) द्वारिका पीठ-तीर्थ एवं आश्रम दोनों को जोड़ा गया। (2) ज्योतिर्मठ- गिरी, पर्वत, सागर (3) गोवर्द्धन मठ-वन, पुरी, अरण्य एवं (4) श्रृंगेरी पीठ-सरस्वती, तीर्थ, अरण्य, भारती। आदि शंकराचार्य ने एक ही दार्शनिक ढांचे के तहत विभिन्न धार्मिक प्रथाओं को सुव्यवस्थित किया, उन्हें सुदृढ़ता प्रदान की। अद्वैत वेदांत की उनकी शिक्षा अद्वैत और ब्रह्म (सर्वोच्च वास्तविकता) के साथ स्वयं की एकता पर जोर देती है। यह एक क्रांतिकारी विचार तो था ही, जिसका भारत के धार्मिक परिदृश्य पर

भी बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। यह दशनामी अखाड़े केवल धार्मिक संगठन ही नहीं हैं, बल्कि यह सांस्कृतिक और सामाजिक संस्थाएं भी हैं। दशनामी अखाड़ा को लेकर प्रसिद्ध इतिहासकार सर जदुनाथ सरकार ने अपनी पुस्तक "दशनामी नागा संन्यासियों का इतिहास" के अध्याय चार में लिखा है कि किस प्रकार से ब्रिटिश भारत में दशनामी अखाड़ों ने ईसाईयो द्वारा हो रहे "मतान्तरण" को लेकर जन-जागरण का काम किया।

इन अखाड़ों में शास्त्रधारी और शस्त्रधारी दो प्रकार के विभाजनों को भी इंगित किया गया है। अखाड़ों के अपने कठोर नियम, अपनी संहिता होती है, जिनका पालन करना अखाड़े के सभी सदस्यों के लिए अनिवार्य होता है। इन्ही नियमों से यह नियंत्रित होते हैं, इनका जीवन सादगीपूर्ण, अनुशासित, आध्यात्मिक अभ्यास और मानव कल्याण की ओर अग्रसर होता है। मोक्ष प्राप्त करना इनका अंतिम लक्ष्य होता है। हम सभी को विदित है कि अठारहवीं शताब्दी के अंत में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध बंगाल में योगी, नाथ, गिरी, पुरी, गोस्वामी, दशनामी तथा आदि शंकराचार्य के समर्थक अनुयायीयों आदि ने किसानों को जागृत कर ब्रिटिश शासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था। जिसे इतिहास में संन्यासी विद्रोह के नाम से भी जाना जाता है। जिसे बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय ने 'आंनद मठ' नामक अपने कालजयी उपन्यास में उद्धृत किया है। भारत की आध्यात्मिक चेतना को जन-जन तक पहुंचाने का कार्य हमारे साधु-संत, हमारे मठ-मंदिर, हमारे उत्सव-पर्व, त्योहार-मेले आदि ही करते हैं। इसलिए हिन्दू मेलों में सबसे अधिक आकर्षण कुम्भ मेले का होता है। इन कुम्भ मेलों के आयोजन में दशनामी अखाड़ों की महती भूमिका होती है। दशनामी अखाड़े केवल सांस्कृतिक-आध्यात्मिक भूमिका मात्र के लिए नहीं हैं बल्कि यह मेले के आयोजन के अभिन्न अंग भी हैं। यह अखाड़े दुनिया भर से आने वाले तीर्थयात्रियों को संरचना, नेतृत्व और मार्गदर्शन देने का कार्य करते हैं। हमारे कुम्भ मेले में सबसे आकर्षक नागा साधुओं की

कुम्भ मेलों के आयोजन में दशनामी अखाड़ों की महती भूमिका होती है। दशनामी अखाड़े केवल सांस्कृतिक-आध्यात्मिक भूमिका मात्र के लिए नहीं हैं बल्कि यह मेले के आयोजन के अभिन्न अंग भी हैं। यह अखाड़े दुनिया भर से आने वाले तीर्थयात्रियों को संरचना, नेतृत्व और मार्गदर्शन करने का कार्य करते हैं।

शोभा यात्रा होती है। क्या किसी ने कभी सोचा है कि यह नागा साधु वर्षों कहां रहते हैं लेकिन कुम्भ स्नान के समय न जाने कहां से भारी संख्या में निकल कर आते हैं। ये नागा साधु, दशनामी अखाड़ों के तपस्वी हैं जो सांसारिक संपत्ति के पूर्ण त्याग के लिए जाने जाते हैं। इन तपस्वियों को अक्सर नग्न और राख से सने हुए दिखाया जाता है, जो तप, वैराग्य और भक्ति के उच्चतम आदर्शों को अपनाते हैं। इन्ही नागा साधुओं को कुम्भ में होने वाले भव्य अमृत स्नान और कुम्भ क्षेत्र प्रवेश शोभा यात्रा का नेतृत्व करने का दायित्व प्राप्त होता है। यह शोभा यात्राएं न केवल धार्मिक उत्साह का प्रदर्शन हैं बल्कि आध्यात्मिक शुद्धता, ईश्वर के प्रति समर्पण एवं सनातन धर्म की शक्ति को भी अभिव्यक्त करती हैं।

कुम्भ मेला परम्परा हमारे देश की विमर्श परंपरा को सजीव करने का काम करती है। यहां शास्त्रों पर चर्चा, संतों के व्याख्यान, देश और विश्व को सनातन का संदेश इन सभी पर मंथन होता है। यह अखाड़े तीर्थयात्रियों को प्राचीन हिन्दू ग्रंथों, जैसे वेद, उपनिषद और श्रीमद्भगवद्गीता के साथ-साथ समकालीन आध्यात्मिक प्रथाओं के बारे में जानने के लिए एक स्थान प्रदान करते हैं। इन शिक्षाओं के माध्यम से, अखाड़े बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास के माहौल को बढ़ावा देते हुए हिन्दू आध्यात्मिकता की परंपराओं को संरक्षित करने में सक्रिय भूमिका निभाते आये हैं। कुम्भ मेले में दशनामी अखाड़ों की भागीदारी का एक और महत्वपूर्ण पहलू पारंपरिक अनुष्ठानों को बनाए रखने में उनकी भूमिका है, जो इस आयोजन की रीढ़ हैं। अखाड़े यह सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबद्ध हैं कि कुम्भ पर्व के अनुष्ठान अत्यंत पवित्रता और श्रद्धा के साथ किए जाएं। वे शुद्धिकरण संस्कार, शोभायात्रा, स्नान समारोह और प्रार्थना की देखरेख करते हैं। अखाड़ों को मेले की आध्यात्मिक और आनुष्ठानिक अखंडता के संरक्षक के रूप में देखा जाता है। कुम्भ मेले में दशनामी अखाड़ों की भागीदारी हिन्दू धर्म की एकता और विविधता का भी प्रतिबिंब है। यद्यपि अखाड़े अलग-अलग दार्शनिक और सांप्रदायिक परंपराओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, लेकिन कुम्भ के दौरान वे सामूहिक भक्ति की भावना से एक साथ आते हैं। यह आयोजन संप्रदाय की सीमाओं और बाधाओं से दूर है, जिसमें तपस्वियों, भक्तों और संतों के विभिन्न समूह अनुष्ठानों और समारोहों में उत्साह के साथ भाग लेते हैं, जो हिन्दू सनातन धर्म की बहुलतापूर्ण एकत्व प्रकृति को प्रदर्शित करता है। दशनामी अखाड़े पूजा और आध्यात्मिक अभ्यास के प्रति अपने समावेशी दृष्टिकोण के माध्यम से इस भावना का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। दशनामी अखाड़े न केवल कुम्भ मेले के भीतर एक आध्यात्मिक शक्ति हैं, वे हिन्दू तप और अनुशासन की स्थायी शक्ति के प्रतीक भी हैं। तपस्या के प्रति उनकी प्रतिबद्धता, परंपरा के प्रति उनकी गहरी श्रद्धा और समाज की सेवा के प्रति उनका समर्पण ऐसे मूल्य हैं जो सम्पूर्ण विश्व को इन उच्च मूल्यों के लिए प्रेरित करते हैं। कुम्भ मेला इन तपस्वियों के लिए अपनी भक्ति और शक्ति प्रदर्शित करने के एक मंच के रूप में, हिन्दू आध्यात्मिकता और सनातन धर्म की शाश्वत प्रकृति और सम्पूर्ण विश्व के कल्याण हेतु आध्यात्मिक अनुशासन के महत्व का स्मरण कराने वाला शक्ति केन्द्र है।

डॉ. यशार्थ मंजुल
प्रभारी, फिल्म अध्ययन विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विवि., वर्धा

महाकुम्भ के अखाड़े सशक्तीकरण का केंद्र

किन्नर अखाड़े ने वर्ष 2015 में उज्जैन सिंहस्थ कुम्भ में, 2019 में प्रयागराज के अर्ध कुम्भ में और 2021 में हरिद्वार के कुम्भ में प्रमुख रूप से अपनी भागीदारी की। 2019 के अर्ध कुम्भ में किन्नर अखाड़े का जूना अखाड़े के आचार्य महामंडलेश्वर स्वामी अवधेशानंद गिरि जी महाराज के नेतृत्व में एक समझौता हुआ जिसके अंतर्गत अमृत स्नान में किन्नर आखाडा जूना अखाड़े के साथ भागीदारी करेगा।

प्रत्येक 12 वर्ष पर आयोजित होने वाला कुम्भ भारत की सनातन प्रकृति का प्रतीक है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' जो सनातन धर्म का मूल है यहां परिलक्षित होता है। विश्व ग्राम की परिकल्पना यहां साकार रूप में दिखाई देती है। सबके लिए एक समान व्यवस्था, कोई भूखा नहीं है, सब एक साथ बैठे भोजन कर रहे हैं, सेवा कर रहे हैं और आनंदित हैं। भारत की इस समावेशी प्राचीन परंपरा के संदर्भ में गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा भी है-

माघ मकरगत रबि जब होई।
तीरथपतिहिं आव सब कोई।।
देव दनुज किंनर नर श्रेनीं।
सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनीं।।

भारत विरोधी सभी विमर्श कुम्भ में पहुंचते ही धराशायी हो जाते हैं। यदि भारत को समझना है तो जीवन में एक बार कुम्भ आना ही पड़ेगा। लाखों की संख्या में विदेशी जन भी इसी भाव के साथ इस वर्ष भी प्रयाग में चल रहे महाकुम्भ में उपस्थित रहते हुए दान व स्नान कर रहे हैं।

अखाड़े महाकुम्भ का एक महत्वपूर्ण अंग है। अखाड़ों को हिन्दू धर्म और संस्कृति के आध्यात्मिक और सांस्कृतिक संरक्षक के रूप में देखा जाता है। इस परंपरा की शुरुआत का श्रेय आदि शंकराचार्य को जाता है। उन्होंने साधु-संतों के संगठनों को 'अखाड़ा' नाम दिया। प्राचीन काल में हिन्दू धर्म की रक्षा के उद्देश्य से आदि शंकराचार्य ने अखाड़ों के रूप में शस्त्र और शास्त्र विद्या में निपुण साधुओं की व्यवस्था स्थापित की। आधुनिक समय में, जबकि कुछ अखाड़े अभी भी शस्त्र विद्या के पहलुओं को बरकरार रखे हुए हैं, कई ने अपना ध्यान सामाजिक कार्य, शिक्षा और सामुदायिक सेवा की ओर स्थानांतरित कर दिया है, जो समकालीन समाज में उनकी विकसित होती भूमिका को दर्शाता है। इन अखाड़ों का एक समृद्ध इतिहास है और इन्हें शैव, वैष्णव, उदासीन, किन्नर अखाड़ों में वर्गीकृत किया गया है। शैव अखाड़ों के अंतर्गत जूना, निरंजनी, महानिर्वाणी, आवाहन, अग्नि, आनंद, अटल को मिला कर कुल सात अखाड़े समाहित हैं। वैष्णव अखाड़ों के अंतर्गत श्री निर्वाणी आखाडा, श्री दिगंबर अखाड़ा, श्री निर्मोही अखाड़ा एवं उदासीन अखाड़ों के अंतर्गत नया अखाड़ा, बड़ा अखाड़ा और निर्मल पंचायती अखाड़े समाहित हैं।

महाकुम्भ की इसी समावेशी परंपरा का एक उदाहरण है 'किन्नर अखाड़ा' और मातृशक्ति संन्यासिनियों की दीक्षा। यह महाकुम्भ आध्यात्मिक परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण बदलाव का प्रतीक है। 1000 से अधिक महिलाओं को कुम्भ में भाग लेने वाले प्रमुख अखाड़ों में दीक्षा दिए जाने का अनुमान है, जिनमें से कई पहले ही संन्यास ले चुकी हैं, इसमें संस्कृत में पीएच.डी. उपाधि प्राप्त राधेनंद भारती जैसी महिलाएं भी शामिल हैं। अखाड़ों में मातृशक्ति को शामिल करना आध्यात्मिक जीवन में उनकी भूमिका की बढ़ती मान्यता को दर्शाता है, कुछ अखाड़ों ने नारी भिक्षुओं के लिए अलग स्थान भी बनाए हैं।

उदाहरण के लिए श्री पंचदशनाम जूना अखाड़ा, जो कुम्भ में सबसे बड़ा और सबसे प्रभावशाली अखाड़ों में से एक है। इस अखाड़े ने 200 से अधिक मातृशक्ति को संन्यास की दीक्षा दी है और यह संख्या और बढ़ने की उम्मीद है। इसके अलावा, जूना अखाड़े ने हाल ही में अपनी महिला भिक्षुओं के संगठन का नाम बदलकर संन्यासिनी श्री पंचदशनाम जूना अखाड़ा कर दिया है, जिससे इसे आध्यात्मिक समुदाय के भीतर एक आधिकारिक और सम्मानित पहचान मिल गई है। हमारे वैदिक वांग्मय में जिस आर्य संस्कृति का गुणगान मिलता है, वह मूलतः मातृसत्तात्मक ही थी। वेदों में स्त्री यज्ञीय है। वेद नारी को अत्यंत महत्वपूर्ण, गरिमामय, उच्च स्थान प्रदान करते हैं। भारतीय धर्म को छोड़कर विश्व का कोई भी धर्म स्त्री को इतनी अधिक प्रधानता नहीं देता। पुरुष साधु- संन्यासियों की भांति स्त्री साध्वियों-संन्यासिनों का उद्देश्य भी जनकल्याण की भावना से समाज में फैली विकृतियों को दूर करना है।

इस प्रकार लैंगिक समानता को अपनाने में, ये अखाड़े न केवल अपनी आंतरिक संरचनाओं को नया आकार दे रहे हैं, बल्कि महिलाओं को भारत के सांस्कृतिक और आध्यात्मिक ताने-बाने में सक्रिय योगदान देने के लिए भी सशक्त बना रहे हैं। सबसे धनी और सबसे प्रभावशाली अखाड़ों में से एक, महानिर्वाणी अखाड़ा, लैंगिक सशक्तिकरण में सबसे आगे है। महिलाओं के लिए महामंडलेश्वर का पद स्थापित करने वाले पहले अखाड़े के रूप में, यह आध्यात्मिक क्षेत्र में लैंगिक समानता को बढ़ावा दे रहा है। अखाड़े से जुडी साध्वी गीता भारती और संतोष पुरी जैसी महिला महामंडलेश्वरों की भागीदारी यह सुनिश्चित करती है कि महिलाओं को आध्यात्मिक समुदाय का नेतृत्व और मार्गदर्शन करने के लिए भारतीय परम्परा में सदैव अवसर दिए जाते रहे हैं जो पराधीनता काल में बाधित हो गये थे, वर्तमान में नारी संन्यास और मातृशक्ति की आध्यात्मिक चेतना पुनर्स्थापना का निमित्त बन रहा है कुम्भ पर्व।

किन्नर अखाड़ा ट्रांसजेंडर समुदाय का प्रतिनिधित्व करता है, ये शैव और वैष्णव दोनों परम्पराओं को मानता है। महामंडलेश्वर डॉ. लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी के नेतृत्व में 2015 में गठित इस समूह का उद्देश्य हिन्दू धर्म के भीतर किन्नर समुदाय को समर्थन और मान्यता प्रदान करना है। किन्नर अखाड़े ने वर्ष 2015 में उज्जैन के सिंहस्थ कुम्भ में, 2019 में प्रयागराज के अर्ध कुम्भ में और 2021 में हरिद्वार के कुम्भ में प्रमुख रूप से अपनी भागीदारी की। 2019 के अर्ध कुम्भ में किन्नर अखाड़े का जूना अखाड़े के आचार्य महामंडलेश्वर स्वामी अवधेशानन्द गिरि जी महाराज के नेतृत्व में एक समझौता हुआ जिसके अंतर्गत अमृत स्नान में किन्नर अखाड़ा जूना अखाड़े के साथ भागीदारी करेगा। वर्ष 2025 के इस भव्य महाकुम्भ में भी ये अखाड़ा अपनी दृश्यता और महत्व में वृद्धि को जारी रखे हुए है। हालांकि किन्नर अखाड़े की आधिकारिक मान्यता तक की यात्रा चुनौतियों से रहित नहीं थी। प्रारंभ में, पारंपरिक अखाड़ों और समाज के उन वर्गों का विरोध था जो ट्रांसजेंडर के धार्मिक आदेश को स्वीकार करने के लिए अनिच्छुक थे। इसके बावजूद, लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी के नेतृत्व में किन्नर अखाड़े के सदस्यों की दृढ़ता ने इन बाधाओं को दूर करने में मदद की। किन्नर समुदाय हिन्दू रीति-रिवाजों और परंपराओं से गहराई से जुड़ा हुआ है, जो अक्सर महत्वपूर्ण आयोजनों के दौरान आशीर्वाद देते हैं। उनकी भागीदारी कुम्भ मेले में एक अनूठा आयाम जोड़ती है, समावेशिता और जागरूकता को बढ़ावा देती है। किन्नर लंबे समय से भारत के सांस्कृतिक और आध्यात्मिक ताने-बाने का हिस्सा रहे हैं, जिन्हें प्राचीन काल में सम्मान से देखा जाता था। आधुनिक समाज में ये हाशिए पर पहुंच गए हैं। किन्नर अखाड़े का गठन ट्रांसजेंडर समुदाय को दी गई आध्यात्मिक विरासत और सामाजिक सम्मान को पुनः प्राप्त करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था। कुम्भ मेले में मान्यता मिलने के बाद से किन्नर अखाड़े की प्रसिद्धि और प्रभाव काफी बढ़ गया है। उन्होंने ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के अधिकारों और सम्मान की वकालत करते हुए विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेना जारी रखा है। उनकी भागीदारी ने व्यापक समाज के भीतर ट्रांसजेंडर मुद्दों के बारे में अधिक संवाद और जागरूकता को भी प्रेरित किया है। किन्नर अखाड़े की गतिविधियां धार्मिक अनुष्ठानों तक ही सीमित नहीं हैं। वे शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और कानूनी अधिकारों की वकालत सहित सामाजिक पहल में सक्रिय रूप से शामिल हैं। ये ट्रांसजेंडर समुदाय के बारे में जागरूकता बढ़ाने और सामाजिक स्वीकृति को बढ़ावा देने के लिए कार्यशालाएं, सेमिनार और सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित करते हैं। इस कुम्भ में भी ये लैंगिक समानता, एचआईवी/एड्स जागरूकता और मानसिक स्वास्थ्य जैसे विषयों पर कार्यशालाएं और सेमिनार आयोजित करेंगे। इन आयोजनों का उद्देश्य जनता को शिक्षित करना और ट्रांसजेंडर समुदाय की अधिक समझ और स्वीकृति को बढ़ावा देना है।

श्री पंचदशनाम जूना अखाड़ा, जो कुम्भ में सबसे बड़ा और सबसे प्रभावशाली अखाड़ों में से एक है। इस अखाड़े ने 200 से अधिक नारी शक्ति को संन्यास की दीक्षा दी है और यह संख्या बढ़ने की उम्मीद है।

किन्नर अखाड़े की स्थापना और मान्यता एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक बदलाव का प्रतिनिधित्व करती है, जो विविधता को अपनाने और समानता को बढ़ावा देने की दिशा में एक व्यापक प्रवृत्ति को दर्शाती है। यह दुनिया भर में हाशिए पर रहने वाले समुदायों के लिए एक प्रेरणा के रूप में कार्य करता है और सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराओं में समावेशिता के महत्व को भी प्रदर्शित करता है।

यह सनातन धर्म का अद्भुत सौन्दर्य है कि इसके लिए कोई भी पराया नहीं है, इसमें मौलिक रूप से कोई भेद-भाव नहीं है। पुरातन परम्पराओं के साथ-साथ अधुनातन को युगानुकुल रूप में अपने भीतर समाहित कर लेने की अद्भुत क्षमता ही सनातन धर्म को विशिष्ट बनाती है।

जब गणतंत्र दिवस की परेड में स्वयंसेवकों ने प्रतिभाग किया

डॉ. प्रताप निर्भय सिंह
शोध प्रमुख, प्रेरणा शोध संस्थान न्यास, नोएडा

श्री गुरुजी चीन की नीतियों को लेकर पहले से ही आशंकित थे। 1962 में अपने राजस्थान प्रवास पर चित्तौड़ की एक सभा में उन्होंने स्पष्ट कहा था कि मेरे पास पक्की जानकारी है कि चीन भारत पर आक्रमण करने वाला है। अलवर में भी उन्होंने इसे दोहराया था। वर्ष 1960 में भी उन्होंने बम्बई में पत्रकारों के साथ वार्ता में चीनी आक्रमण की बात की थी, जिसे एक संपादक ने तब गैर जिम्मेदाराना बताया था।

इस शृंखला में हम बात करेंगे संघ यात्रा के चतुर्थ दशक 1955 से 1965 की।

तत्कालीन सरसंघचालक श्री गुरुजी के कुशल मार्गदर्शन में संघ आगे बढ़ रहा था। 1953 में पहले राज्य पुनर्गठन आयोग का गठन हुआ। आयोग ने 30 सितंबर 1955 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की उसके आधार पर 1956 में नए राज्यों का निर्माण हुआ जिसमें आंध्र प्रदेश के निर्माण के बाद महाराष्ट्र और गुजरात भी भाषा के आधार पर अलग राज्य बनाए गए। भाषाई आधार पर राज्य निर्माण होने के विरोध में महाराष्ट्र में बड़ा आंदोलन हुआ। श्री गुरुजी भी भाषा के आधार पर राज्यों के गठन को अनुचित मानते थे। संघ प्रारंभ से एक देश, एक राज्य का समर्थक रहा है, भारतीय परम्परा के अनुरूप सारा विश्व एक राज्य बने संघ के स्वयंसेवक ऐसी कल्पना के पक्षधर थे। विभिन्न भाषा-क्षेत्र वाली संस्कृतियों की बात करने वाले राजनेताओं को उन्होंने कहा कि 'आसेतु हिमाचल' हमारी एक ही संस्कृति है और वही संस्कृति हमारे राष्ट्र की आत्मा भी है। हमें देश की संस्कृति, परंपरा, राष्ट्र धर्म की रक्षा करनी चाहिए। देश को धर्मशाला बनाकर काम नहीं चलेगा। राजनीतिक सौदेबाजी की भाषा छोड़कर हमें राष्ट्र का विचार करना चाहिए। इसके बाद पंजाब में भी विवाद शुरू हुआ और पंजाब तथा हरियाणा भी दो अलग-अलग राज्य बने। तब श्री गुरुजी ने दुखी मन से कहा था कि भाषा का प्रेम यदि विच्छेद के लिए प्रयुक्त हो तो त्याज्य ही मानना चाहिए।

1956 में वरिष्ठ कार्यकर्ता एकनाथ जी रानाडे सरकार्यवाह चयनित किए गए। 1956 में ही वरिष्ठ स्वयंसेवक बाला साहब देशपांडे जी के प्रयासों से 'कल्याण आश्रम' की स्थापना हुई जिसके माध्यम से वनवासी क्षेत्रों में संघ के स्वयंसेवक सेवा कार्यों में जुटे।

1959 में जातिवादी एवं सांप्रदायिक निष्ठाओं के इर्द-गिर्द घूमने वाली केरल की वोट की राजनीति का लाभ उठाकर संसदीय लोकतांत्रिक पद्धति को पूर्णतया अस्वीकार कर देने वाली कम्युनिस्ट पार्टी केरल में सत्तारूढ़ हो गयी जबकि उसे आम चुनाव में केवल 35 प्रतिशत मत मिले थे और आधी से कम सीटें प्राप्त हुई थी। कम्युनिस्ट पार्टी ने पांच स्वतंत्र विधायकों का समर्थन प्राप्त कर 5 अप्रैल 1957 को अपना मंत्रिमंडल बनाने में सफलता प्राप्त कर ली थी। कम्युनिस्ट दल की भौतिकवादी विचारधारा, अधिनायकवादी प्रवृत्तियां एवं देशबाह्य निष्ठाओं के कारण संघ का इससे मौलिक मतभेद रहा है। तब स्वाभाविक रूप से संघ के स्वयंसेवकों का झुकाव केरल के कम्युनिस्ट विरोधी आंदोलन की तरफ हुआ। केरल में कम्युनिस्ट विरोधी आंदोलन को देखते हुए पाञ्चजन्य ने केरल विशेषांक निकालने की योजना बनाई और उस विशेषांक के लिए श्री गुरुजी से आशीर्वाद मांगा गया। जिसका प्रतिउत्तर उन्होंने एक व्यक्तिगत पत्र द्वारा पाञ्चजन्य संपादकीय टोली के सदस्य देवेंद्र स्वरूप जी को दिया। पत्र में श्री गुरु जी का स्पष्ट मंतव्य था कि केरल के विषय में योग्य वृत्त (सटीक

जानकारी) आने तक प्रतीक्षा करनी चाहिए। साथ ही उन्होंने यह भी चेताया कि सत्ताधिष्ठित दल को अपदस्त करना एवं स्वयं सत्ता प्राप्त करना ही उचित दिखता हो ऐसा संविधान के प्रति सर्वथा अनादर है। उन्होंने देश के संविधान में श्रद्धा रखते हुए संवैधानिक मर्यादानुकुल आचरण का महत्व सामने रखा था। यदि किसी दल विशेष से वैचारिक मतभेद हैं तो भी संवैधानिक विधि से ही उसे सत्ता से बाहर करने के उचित अवसर की प्रतीक्षा पर बल दिया था। श्री गुरु जी ने स्पष्ट किया था कि देश एक विशिष्ट संवैधानिक ढांचे के भीतर कार्य करता है उस ढांचे पर किसी प्रकार का प्रहार कदापि उचित नहीं ठहराया जा सकता है।

भारत चीन युद्ध और संघ : तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने चीन की साम्यवादी नीतियों से प्रभावित होकर तिब्बत को भी चीन का हिस्सा स्वीकार कर लिया था, तिब्बत के धार्मिक गुरु दलाई लामा को भारत में शरण लेनी पड़ी थी उसके बाद भी नेहरू जी चीन को लेकर नहीं चेते। 1962 में चीन ने भारत पर आक्रमण कर दिया। तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को चीन से कदापि यह अपेक्षा नहीं थी। जबकि श्री गुरुजी चीन की नीतियों को लेकर पहले से ही आशंकित थे। 1962 में अपने राजस्थान प्रवास पर चित्तौड़ की एक सभा में उन्होंने स्पष्ट कहा था कि मेरे पास पक्की जानकारी है कि चीन भारत पर आक्रमण करने वाला है, दो दिन बाद उन्होंने अलवर में भी इसी बात को दोहराया था। श्री गुरुजी की दूरदृष्टि इस बात से ही आंकी जा सकती है कि वर्ष 1960 में उन्होंने बम्बई में पत्रकारों के साथ वार्ता में चीनी आक्रमण की बात की थी, जिसे एक दैनिक पत्र के संपादक ने तब गैर जिम्मेदाराना बताया था। चीनी आक्रमण के समय असम की स्थिति भी गंभीर थी। वहां कानू डेका, पदम प्रसाद तथा पदमजाकांत सेनापति नाम के स्वयंसेवकों ने अपने स्थानीय साथियों के साथ मिलकर सेना के अधिकारियों से संपर्क किया और उनकी सहायता से रात-दिन पहरेदारी कर खाली हुए घरों को पूर्वी पाकिस्तानी घुसपैठियों के हाथों लुटने से बचाया। श्री गुरु जी के निर्देशन में स्वयंसेवक असम के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर भी सेना के जवानों की सहायता के लिए जी जान से समर्थन के लिए जुट गये। इसके साथ ही चीनी आक्रमण के समय संघ के स्वयंसेवकों ने अपने नागरिक कर्तव्यों का पालन करते हुए विशेष दायित्व का निर्वहन किया। इस योगदान को देखते हुए संघ को कुचल देने का स्वप्न देखने वाले तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित नेहरू की सरकार ने पहली बार 26 जनवरी 1963 के गणतंत्र दिवस परेड में संघ की एक टुकड़ी को राजपथ पर परेड के लिए आमंत्रित किया। आमंत्रण केवल 2 दिन पहले मिला था इसके बावजूद ढाई हजार स्वयंसेवकों ने अपने पूर्ण गणवेश के साथ गर्व से राजपथ पर परेड में भाग लिया।

वर्ष 1963 में स्वामी विवेकानंद का जन्म शताब्दी वर्ष मनाया गया और इस अवसर पर संघ ने कन्याकुमारी में स्वामी विवेकानंद की स्मृति में एक भव्य स्मारक बनाने का प्रस्ताव पारित किया। वर्ष 1963 में ही 12 जनवरी 1963 को भारत विकास परिषद् की संकल्पना की गयी, इसे साकार रूप 10 जुलाई 1963 को (पंजीकरण हो जाने पर) मिला। इसके प्रथम अध्यक्ष महान राष्ट्रवादी एवं दिल्ली के भूतपूर्व महापौर लाला हंसराज गुप्ता एवं प्रथम महामंत्री सेवाभावी सुप्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. सूरज प्रकाश बने। परिषद् में भारत माता को आराध्य और स्वामी विवेकानन्द को पथ प्रदर्शक स्वीकार किया गया। 'वन्दे मातरम्' को प्रारम्भिक प्रार्थना और राष्ट्रगान 'जन-गण-मन' को समाप्त गीत का स्थान दिया गया।

संपूर्ण विश्व के हिन्दू समुदाय को संगठित करने के उद्देश्य से 29 अगस्त 1964 को श्री कृष्ण जन्माष्टमी के शुभ पर्व पर भारत की संत शक्ति के आशीर्वाद के साथ विश्व हिन्दू परिषद् की स्थापना की गई।

संपूर्ण विश्व के हिन्दू समुदाय को संगठित करने के उद्देश्य से 29 अगस्त 1964 को श्री कृष्ण जन्माष्टमी के शुभ पर्व पर भारत की संत शक्ति के आशीर्वाद के साथ विश्व हिन्दू परिषद् की स्थापना की गई। विहिप का उद्देश्य हिन्दू समाज को संगठित करना, हिन्दू धर्म की रक्षा करना और समाज की सेवा करना था।

भारत अभी चीन से युद्ध की विभीषिका से उबर भी नहीं पाया था कि 1965 में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण कर दिया। ऐसे समय में तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने राजनीतिक नेताओं के साथ-साथ सामाजिक एवं सांस्कृतिक नेता के रूप में तत्कालीन सरसंघचालक श्री गुरुजी को विचार विमर्श के लिए आमंत्रित किया। श्री गुरुजी ने शास्त्री जी को कहा कि जिन-जिन कामों के लिए पुलिस और अर्धसैनिक बलों का प्रयोग होता है वहां हमारे स्वयंसेवक कार्य कर सकते हैं। आप अर्धसैनिक बलों को अन्य महत्वपूर्ण कार्यों में लगा सकते हैं। युद्ध काल में संघ के स्वयंसेवकों ने विभिन्न नागरिक दायित्वों की व्यवस्थाओं को संभालने में सरकारी कर्मचारियों की सहायता की। श्री गुरुजी ने शास्त्री जी को यह परामर्श भी दिया था कि यदि पाकिस्तान की सेना भारतीय क्षेत्र में घुसकर आक्रमण कर सकती है तो हमारी सेना को भी उनके क्षेत्र में भीतर घुसकर आक्रमण करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए जिसे शास्त्री जी ने सहर्ष स्वीकार किया था। शास्त्री जी के ताशकंद जाने से पूर्व श्री गुरुजी को कहीं से कोई संदेश मिला था तब उन्होंने श्री अटल बिहारी वाजपेयी को एक पत्र लिखकर शास्त्री जी को संदेश भिजवाया था कि वे ताशकंद की यात्रा पर न जाए परंतु वे पहले ही जा चुके थे। वहां उनकी षड्यंत्रपूर्ण मृत्यु हो गयी। 1965 में मधुकर दत्तात्रेय देवरस उपाख्य बाला साहब देवरस संघ के सरकार्यवाह चुने गए। 1965 में विदर्भ में एक बड़ा प्रांतिक शिविर हुआ जिसमें 5000 से अधिक स्वयंसेवकों ने भाग लिया।

इस अंक में इतना ही अगली शृंखला में बात करेंगे संघ यात्रा के अगले दशक की...

समर्पण और अनुशासन की भावना का संलयन : संघ

संघ के बारे में जानने की सभी की इच्छा रहती है। संघ की क्या कार्य पद्धति है? संघ के स्वयंसेवक कैसे अपना दायित्व निर्वहन करते हैं? क्या समय के साथ संघ भी बदलाव को अपनाता है? संघ को लेकर एक स्वयंसेवक से बढ़कर कौन इनका उत्तर दे सकता है? इस विषय पर संघ के वरिष्ठ स्वयंसेवक डॉ. दर्शनलाल अरोड़ा जी से प्रेरणा मीडिया टीम की सदस्य डॉ. नीलम कुमारी ने विस्तार से चर्चा की, प्रस्तुत है संपादित अंश-

सामान्यतः यह देखा गया है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ जितना सुप्रसिद्ध है उतना सुपरिचित नहीं है। अर्थात् संघ को केवल लिखने पढ़ने, बोलने, देखने से नहीं समझा जा सकता है। संघ को समझने के लिए संघ को जीना आवश्यक है। हमारे लिए बड़े सौभाग्य की बात है कि संघ में क्षेत्रीय संघचालक रहे आदरणीय प्रो. दर्शनलाल अरोड़ा जी, जिन्होंने न केवल संघ को देखा है, बल्कि संघ को जिया है अर्थात् अपना सम्पूर्ण जीवन संघ को समर्पित कर देने वाले ऐसे विराट व्यक्तित्व से लिए गए साक्षात्कार के संपादित अंश प्रस्तुत हैं-

आपका संघ में लंबे समय का अनुभव रहा है, हम जानना चाहते हैं कि आप संघ के संपर्क में कब आए?

मैं बाल्यकाल से ही संघ के संपर्क में हूं। मैं पंजाब जिले के एक भाग में रहता था जो कि अब पाकिस्तान में चला गया है। जहां तक मुझे याद आता है, जब मैं कक्षा दो में पढ़ता था और मेरी आयु लगभग 5–6 वर्ष रही होगी तब मैं संघ की शाखा में जाया करता था। मेरी संघ आयु लगभग 80 वर्ष हो चुकी है।

आपको शिक्षण के क्षेत्र में भी काफी लंबा अनुभव है आप की शिक्षा-दीक्षा कहां से हुई है?

जैसा कि मैंने पहले भी बताया है कि मेरी प्रारंभिक शिक्षा पंजाब में हुई और उसके बाद हम उत्तर प्रदेश के सहारनपुर आ गए, सहारनपुर से मैंने बी.एस-सी. व मेरठ

कॉलेज से एम.एस-सी. किया और वहां से ही मैं प्रचारक होकर निकला। उसके बाद मेरठ के डी. एन. कॉलेज में मैं रसायन विज्ञान विषय में प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हुआ।

आपकी दृष्टि में संघ क्या है ?

जैसा कि इसके नाम से ही प्रदर्शित होता है, संघ 3 शब्दों से मिलकर बना है। राष्ट्रीय-स्वयंसेवक-संघ जिसे लोग आर. एस. एस. भी कहते हैं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अर्थात् स्वयं की प्रेरणा से राष्ट्र की सेवा करने वाले लोगों का संगठन। यह विश्व का सबसे बड़ा संगठन है और इसके साथ लगभग 40 समवैचारिक संगठन भी हैं, जैसे अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद, भारतीय मजदूर संघ, भारतीय किसान संघ, विश्व हिन्दू परिषद, वनवासी कल्याण आश्रम आदि। संघ केवल भारत तक ही सीमित नहीं है बल्कि जहां-जहां संघ की आवश्यकता हुई, संघ के कार्यकर्ता वहां-वहां तक पहुंचे। लगभग 40 अन्य देशों में भी संघ विभिन्न नामों से जैसे भारतीय सांस्कृतिक संघ, सनातन धर्म संघ आदि के नाम से कार्यरत है।

संघ में आपने किन-किन दायित्वों का निर्वहन किया है?

मैंने शाखा के गटनायक से लेकर चौथी कक्षा में गणशिक्षक, फिर मुख्य शिक्षक, मंडल कार्यवाह, एवं शारीरिक प्रमुख के उत्तरदायित्व का निर्वहन किया है, मेरी विशेष रुचि शारीरिक क्षेत्र में होने के कारण मुझे प्रांत शारीरिक प्रमुख, उत्तर प्रदेश शारीरिक प्रमुख फिर क्षेत्र कार्यवाह पश्चिमी उत्तर प्रदेश जो कि 2001 में उत्तर प्रदेश के दो भागों में बांटने के कारण बना था- पूर्वी उत्तर प्रदेश और पश्चिमी उत्तर प्रदेश, तो मुझे पश्चिमी उत्तर प्रदेश में प्रथम क्षेत्र कार्यवाह का उत्तरदायित्व दिया गया था। मैंने 9 वर्ष तक क्षेत्र कार्यवाह के रूप में कार्य किया, वहां रहने के बाद मैंने क्षेत्र संघचालक का दायित्व भी निभाया और वर्तमान में मैं क्षेत्रीय

कार्यकारिणी सदस्य हूं।

क्षेत्र संघचालक के नाते आपका संघ में कैसा अनुभव रहा?

क्षेत्र संघचालक के नाते मेरा प्रवास तीनों प्रांत में रहता था - उत्तराखंड, मेरठ व ब्रज प्रांत और संघ शिक्षा वर्ग जिसे हम सभी ओ. टी. सी. के नाम से भी जानते हैं जिसमें प्रथम वर्ष में स्थानीय वर्ग लगता है, द्वितीय वर्ष जोकि स्थानीय और क्षेत्रीय दोनों को मिलाकर लगता है और तृतीय वर्ष नागपुर में होता है। तृतीय वर्ष के संघ शिक्षा वर्ग 2010 में मुझे मुख्य शिक्षक व बाद में सर्वाधिकारी का उत्तरदायित्व मिला मैंने उसे अपनी पूरी निष्ठा व ईमानदारी से निभाने का प्रयास किया तथा सभी कार्यकर्ताओं ने मेरा पूरा सहयोग भी किया। जहां तक अनुभव की बात है तो मेरा अनुभव यह है कि आप सक्रिय रहते हैं तो आपके कार्यकर्ता भी सक्रिय रहते हैं और मैंने संघ में रहते हुए संघ को जिया। मेरा यह अनुभव है कि संघ में केवल देने का भाव होता है, समर्पण की भावना होती है और सभी स्वयंसेवक अपने आनंद व आत्मसंतुष्टि के लिए यह सब करते हैं। हमें समाज सेवा व राष्ट्रहित के कार्यों में बहुत आनंद मिलता है और इसमें अनुशासन और समर्पण का भाव रहता है।

आपने संघ को इतना करीब से देखा है तो संघ की कार्य पद्धति व कार्य शैली के बारे में बताएं।

अगर हम संघ की कार्य पद्धति और शैली के बारे में बात करें तो सबसे पहले तो व्यक्ति को व्यक्ति से मिलना मिलाना या संपर्क करना, दूसरा शाखा या कार्यक्रमों में उनको लाना और अच्छे कार्यकर्ता बनाना, कार्यकर्ता का विकास करना, व्यक्तित्व का निर्माण करना यही सब संघ की प्रक्रिया होती है। सबसे पहले संघ की यही पद्धति है कि जितना अधिक से अधिक संपर्क हो सके, संपर्कों के माध्यम से व्यक्तियों को अपने कार्यक्रमों में और शाखा में लाना और फिर कार्यकर्ताओं का विकास करना यही संघ की कार्य पद्धति है।

समय के बदलाव के साथ संघ की कार्य पद्धति व शैली में कितना परिवर्तन आया है?

परिवर्तन प्रकृति का नियम है और समय के साथ सब कुछ धीरे-धीरे बदलता है, जैसे-जैसे आवश्यकता हुई संघ की कार्य पद्धति में भी बदलाव होते गए। सबसे पहले तो केवल तीन विभाग थे- शारीरिक, बौद्धिक और व्यवस्था। पहले कोई प्रचार विभाग नहीं था, लेकिन धीरे-धीरे इसकी आवश्यकता महसूस हुई तो प्रचार विभाग की व्यवस्था की गई। फिर 1989 में परम पूज्य डॉ. हेडगेवार जी की जन्म शताब्दी मनाई गई जिसके उपलक्ष्य में गरीबों, वंचितों और शोषितों को मुख्यधारा में जोड़ने के लिए सेवा विभाग खोला गया। अब भी जैसे-जैसे आवश्यकता होती है वैसे वैसे व्यवस्था भी बदल रही है, संघ की गतिविधियां भी बढ़ रही हैं उसी प्रकार से संघ की पद्धति और कार्यशैली में भी धीरे-धीरे परिवर्तन आ रहा है।

संघ के स्वयंसेवकों के बारे में आपका क्या कहना है?

संघ के कार्यकर्ता तन, मन और धन से राष्ट्र हित के लिए अपना सर्वस्व अर्पण करने के लिए तत्पर रहते हैं और ऐसा कहा जाता है कि संघ में देव दुर्लभ कार्यकर्ताओं की टीम है अर्थात संघ के इतने समर्पित व निष्ठावान कार्यकर्ता हैं कि देवताओं के पास भी ऐसी टीम नहीं है। सभी स्वयंसेवक अपना संपूर्ण जीवन देश-हित में समर्पित कर देते हैं।

संघ में केवल देने का भाव होता है, समर्पण की भावना होती है और सभी स्वयंसेवक अपने आनंद व आत्मसंतुष्टि के लिए यह सब करते हैं। हमें समाज सेवा व राष्ट्रहित के कार्यों में बहुत आनंद मिलता है और इसमें अनुशासन और समर्पण का भाव रहता है।

संघ में देव दुर्लभ कार्यकर्ताओं की टीम है अर्थात संघ के इतने समर्पित व निष्ठावान कार्यकर्ता हैं कि देवताओं के पास भी ऐसी टीम नहीं है। सभी स्वयंसेवक अपना संपूर्ण जीवन देश-हित में समर्पित कर देते हैं।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अन्य संगठनों से किस प्रकार भिन्न है?

नित्य प्रति समाज की सेवा में लगे रहने का कार्य ही संघ को अन्य संगठनों से भिन्न करता है। नित्य प्रति संघ की शाखा लगती है, छोटे से छोटे कार्यकर्ता से लेकर सरसंघचालक तक सभी नित्य प्रति शाखा लगाते हैं, प्रार्थना करते हैं और सब की दिनचर्या एक सी होती है, कहीं भी छोटे-बड़े का भेदभाव नहीं रहता है। यही सब चीजें राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को अन्य संगठनों से भिन्न बनाती है।

आप हमारे पाठकों को क्या संदेश देना चाहेंगे ?

जैसा कि मैंने आपको बताया कि संघ की सारी शक्ति राष्ट्र निर्माण में लगी हुई है, अतः सभी पाठकों से भी निवेदन है कि समरसता के भाव के साथ राष्ट्र निर्माण में अपना सहयोग करें। यह सांस्कृतिक पुनर्जागरण का काल है, अपनी-अपनी सामर्थ्यानुसार सांस्कृतिक पुनरुत्थान के महायज्ञ में अपनी सपरिवार आहुति अवश्य दें। अपनी भावी पीढ़ी को धर्मनिष्ठ और राष्ट्र के प्रति कर्तव्यनिष्ठ बनाना सुनिश्चित करें। सबके सुख की कामना के साथ आगे बढ़ते जाना है यही मेरी शुभकामनाएं हैं।

सांस्कृतिक विरासत के संवाहक हैं पर्व

नीलम भागी (लेखिका, जर्नलिस्ट, ब्लॉगर, ट्रैवलर)

माघ माह में सभी तीर्थ अपने राजा प्रयागराज से मिलने यहां आते हैं। एक ही स्थान पर समय बिताते हुए श्रद्धालु प्रदोष, माघी पूर्णिमा, गुरु रविदास जयंती, जानकी जयंती, छत्रपति शिवाजी जयंती, दयानंद सरस्वती जयंती, शिवरात्रि मिलजुल कर मनाते हैं। सांस्कृतिक आदान-प्रदान के संवाहक बनते हैं।

पूर्वोतर भारत में फरवरी माह पर्यटन का समय है। सूरजकुंड अन्तरराष्ट्रीय शिल्प मेला 1 से 16 फरवरी में भारत के शिल्प और स्थानीय कलाओं का आनन्द उठाने के लिए लाखों लोग फरीदाबाद पहुंचते हैं। काला घोड़ा मुंबई में आयोजित कला उत्सव कला प्रेमियों को अपनी ओर आकर्षित करता है। इसी दौरान एलीफेंटा महोत्सव भी आर्कषण का केंद्र होता है। सूर्य देव की उपासना का पर्व रथ सप्तमी (4 फरवरी) को मनाई जाएगी जिसे भानु सप्तमी या अचला सप्तमी भी कहा जाता है। मुख्य रुप से महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, तेलंगाना सहित भारत के दक्षिणी राज्यों में यह फसल कटाई का संकेत है। महिलाएं घरों में सूर्य देव की तस्वीर बनाती हैं। आंगन में सूर्य की ओर मुंह करके दूध से खीर पायसम बनाया जाता है। परिवार में जिस बच्चे की पहली रथ सप्तमी होती है, उसे लड्डू गोपाल या बालरूप में सजाया जाता है। पड़ोसियों, मित्रों और रिश्तेदारों के बच्चे इस कन्हैया को घेर लेते हैं। परिवार कृष्णा के ऊपर से बोर की बरसात करता है। उसमें बच्चों की पसंद की खाने की चीजों के साथ उस समय के स्थानीय उपलब्ध फल आदि भी होते हैं। स्वागत के लिए द्वार पर रंगोली बनाई जाती है और महिलाओं का हल्दी कुमकुम लगा कर सत्कार किया जाता है। जीवन उर्जा के लिए सूर्यदेव को आभार प्रकट किया जाता है।

फूली हुई सरसों और फूलों के गहनों से सजी धरती ऋतुराज बसंत का स्वागत करती है यानि 'बसंत पंचमी का उत्सव' चहुंओर रंग और उमंग से भरे रहते हैं। पीले कपड़े पहनना, पीले चावल या हलुआ बनाना, खाना, खिलाना और परिवार सहित सरस्वती पूजन करना। इसका भाग है। दिन कोई भी शुभ कार्य कर सकते हैं। बच्चे का अन्नप्राशन यानि पहली बार अन्न खिलाने का संस्कार कर सकते हैं। परिवार का सबसे बड़ा सदस्य बच्चे को खीर चटाता है। इसके अलावा बच्चे का तख्ती पूजन (अक्षर ज्ञान) बसंत पंचमी को करते हैं। सरस्वती पूजन के बाद तख्ती पर हल्दी के घोल से बच्चे की अंगुली से स्वास्तिक बनवाते हैं। पूरा परिवार बोलता है–

गुरु गृह पढ़न गए रघुराई, अल्पकाल सब विद्या पाई।

और फिर बच्चे की स्कूली शिक्षा शुरू होती है।

पूर्वांचल में बसंत पंचमी को होलिका दहन के लिए ढाड़ा गाढ़ देते हैं। फगुआ के बिना होली कैसी!! अब फगुआ, फाग, जोगीरा और होली गायन शुरु हो जाता है। जिसमें शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत और लोकगीत हर्षोल्लास से गाए जाते हैं। प्रवासी घर जाने की तैयारी शुरू कर देते हैं।

वृंदावन बांके बिहारी मंदिर, शाह बिहारी मंदिर, मथुरा के श्री कृष्ण जन्म स्थान और बरसाना के राधा जी मंदिर में ठाकुर जी को बसंत पंचमी के दिन पीली पोशाक पहनाई जाती है और पहला अबीर गुलाल लगा कर

होलिका दहन के लिए ढाड़ा गाड़ा जाता है और बसंत पंचमी से फाग गाने की शुरुआत होती है। देश विदेश से श्रद्धालु ब्रजमंडल की होली में शामिल होने के लिए तैयारी शुरु कर देते हैं। बसंत पंचमी से ब्रज में चलने वाले 40 दिन के उत्सव शुरू हो जाते हैं।

गुरु गोरखनाथ जी के धाम गोरखपुर में मकर संक्राति को खिचड़ी मेला शुरु होता है जो एक महीने से अधिक समय मध्य फरवरी तक चलता है। किसान अपनी पहली फसल की खिचड़ी चढ़ाने के लिए लाइनों में लगे होते हैं। इस प्रसाद की खिचड़ी को मंदिर की ओर से बनाया जाता है और विशाल मेले के साथ मंदिर में खिचड़ी का भंडारा चलता है। गुरु गोरखनाथ के खिचड़ी मेले में कोई भूखा नहीं रह सकता। देश के बड़े आयोजनों में यह मेला है।

बूरी बूट युलो (4–6 फरवरी) बसंत के स्वागत में अरुणाचल प्रदेश की न्याशी जनजाति के द्वारा जीवंत आनंदमय उत्सव मनाया जाता है। बसंत के स्वागत के साथ-साथ अपने पूर्वजों की आत्माओं के सम्मान करने, भरपूर फसल के लिए आर्शीवाद मांगने और अपनी सांस्कृतिक विरासत के उत्सव के रूप में यह कई दिनों तक चलता है। यह उत्सव प्रकृति चक्र से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है।

ओडिसा और पश्चिम बंगाल में महानंदा नवमी (6 फरवरी को) मनाई जाती है। इसके साथ ही हरसू ब्रह्मदेव जयंती भी मनाई जायेगी।

केरल में अदूर के प्राचीन श्री पार्थसारथी मंदिर में 7 फरवरी को आयोजित दस दिवसीय सांस्कृतिक कार्यक्रमों का समापन है। जिसमें हाथियों का प्रदर्शन प्रमुख है।

उदयपुर विश्व संगीत महोत्सव 7 से 9 फरवरी को राजस्थान के उदयपुर में मनाया जाएगा।

जैसलमेर का मरु उत्सव (10 से 12 फरवरी) राजस्थान के सबसे लोकप्रिय त्यौहारों में से एक है जो जैसलमेर से 42 किमी दूर थार रेगिस्तान की चमकदार रेत पर मनाया जाता है। दुनियाभर से पर्यटक यहां रण उत्सव के जीवंत और रंग-बिरंगी वातावरण को अनुभव करने आते हैं।

माघ पूर्णिमा 12 फरवरी को काशी में जन्में संत रविदास की जयंती पर पवित्र नदी में स्नान करके उनके रचे पदों, दोहों को भक्तों द्वारा कीर्तन में गाया जाता है। उनका कहना था कि 'मन चंगा तो कठौती में गंगा'।

ब्राह्मण मत पूजिए जो होवे गुणहीन,
पूजिए चरण चंडाल के जो होवे गुण प्रवीण

परियानमपेट्टा पूरम 17 फरवरी को केरल पलक्कड़ जिले में परियानमपट्टा मंदिर में मलयालम महीने कुंभम में मनाया जाता है। इसमें तीन जुलूस आयोजित किए जाते हैं जिसमें सजे हाथी भाग लेते हैं। सात दिवसीय उत्सव का मुख्य आकर्षण अनुष्ठान में प्राकृतिक रंगों से धरती पर देवी माँ की छवि बनाई जाती है। रात्रि में संगीतमय लोक कलाओं का मंचन किया जाता है।

कोणार्क नृत्य महोत्सव 19 से 23 फरवरी तक ओडिसा के कोणार्क मंदिर में आयोजित किया जाता है।, खजुराहों नृत्य महोत्सव 20 से 26 फरवरी को मध्य प्रदेश कला परिषद् द्वारा खजुराहो में आयोजित होता है।

माघ माह में सभी तीर्थ अपने राजा प्रयागराज से मिलने यहां आते हैं। एक ही स्थान पर समय बिताते हुए श्रद्धालु प्रदोष, माघी पूर्णिमा, गुरु रविदास जयंती, जानकी जयंती, छत्रपति शिवाजी जयंती, दयानंद सरस्वती जयंती, शिवरात्री मिलजुल कर मनाते हैं। सांस्कृतिक आदान-प्रदान के संवाहक बनते हैं। जानकी जयंती (21 फरवरी), पर स्थानीय जलस्रोतों, नदी आदि को पूजा जाता है। वनवास के समय सीता जी ने भी गंगा मैया पार करने से पहले उनसे सकुशल वापिस लौटने की प्रार्थना की थी। इसलिए जानकी जयंती पर श्रद्धालु पवित्र नदियों का पूजन भी करते हैं।

भालेश्वर महादेवी काठमांडू की चंद्रगिरि पहाड़ियों पर स्थित हिन्दू मंदिर है। यह भगवान शिव को समर्पित है। नेपाल के ही गलेश्वर मंदिर को श्रद्धालुओं की आस्था के कारण दूसरे पशुपति के नाम से भी जाना जाता है। पास में ही काली गंडकी और राहु नदी का पवित्र संगम है।

कश्मीर में शिवरात्रि (26 फरवरी) का उत्सव एक सप्ताह तक मनाया जाता है। नेपाल के पशुपतिनाथ मंदिर में भव्य आयोजन होता है। यह ऐसा स्थान है जिसके विषय में यह माना जाता है कि यहां आज भी शिव की उपस्थिति है। भालेश्वर महादेवी काठमांडू की चंद्रगिरि पहाड़ियों पर स्थित हिन्दू मंदिर है। यह भगवान शिव को समर्पित है। गलेश्वर मंदिर श्रद्धालुओं की आस्था के कारण दूसरे पशुपति के नाम से भी प्रसिद्ध है। पास में ही काली गंडकी और राहु नदी का पवित्र संगम है। धार्मिक, ऐतिहासिक और पौराणिक दृष्टि से स्थान बहुत पवित्र है। मान्यता है कि यहां पुलस्त्य, पुल्हा और विश्रवा ऋषि साधना करते थे। शिवरात्रि के अवसर पर भारत के सभी शिव मंदिरों में श्रद्धालुओं की भारी भीड़ लगती है। उज्जैन में महाकालेश्वर और जबलपुर तिलवाड़ा में जाना श्रद्धालु अपना सौभाग्य समझते हैं। भगवान शिव की जटाओं से उनकी पुत्री माँ नर्मदा की उत्पत्ति हुई है। कहते हैं 'नर्मदा के कंकर सब शिवशंकर।

मान्यता है कि बांग्लादेश के चंद्रनाथ धाम, चिटगांव के प्रसिद्ध मंदिर में अभिषेक करने से सुयोग्य पति-पत्नी मिलते हैं।

शिवरात्रि का अर्थ है भगवान शिव की रात्रि, लगभग सभी हिन्दू उत्सव दिन में मनाये जाते हैं पर शिवरात्रि के चारों पहर भगवान शिव का अभिषेक होता है। नृत्य महोत्सव नाट्यांजलि (26 फरवरी), यह तमिलनाडु के नटराज मंदिरों के प्रांगण में एक सप्ताह तक मनाया जाने वाला त्योहार है। उत्साह, परंपरा और खुशियां यही हमारे उत्सवों की मिठास है जिसमें प्रकृति भी हमारे साथ है!

लघुकथा

जहां चाह, वहां राह

पूर्णिमा कौशिक
नोएडा

वीर एक छोटे से गांव में अपने माता-पिता और भाइयों के साथ रहता था। वह बचपन से ही शरारती था, लेकिन उसका एक सपना था- भारतीय सेना में बड़ा अफसर बनना। हालांकि, वीर डरपोक स्वभाव का था और उसके दोस्त अक्सर उसका मजाक उड़ाते थे। एक बार पड़ोसी की खिड़की तोड़ने पर माँ ने उसे समझाया कि उनके पास इसे भरने के पैसे नहीं हैं। यह घटना वीर के मन पर गहरी छाप छोड़ गई।

वीर को गणतंत्र दिवस पर टीवी पर परेड देखना बेहद पसंद था। वह सैल्यूट करते हुए सेना के जवानों की तरह बनने का सपना देखता, लेकिन अपने डर और आत्मविश्वास की कमी के कारण हमेशा उलझा रहता। एक दिन, वीर ने माँ से पूछा, "क्या मैं कभी सेना में जा सकता हूं? सब मेरा मजाक क्यों उड़ाते हैं?" माँ ने उसे समझाया और कहा "बेटा, जहां चाह, वहां राह। अगर दिल से ठान लो, तो असंभव भी संभव हो सकता है। मेहनत, हिम्मत और जुनून से हर सपना पूरा किया जा सकता है।"

माँ की बातों ने वीर को झकझोर दिया। उस रात वह सो नहीं सका। अगले दिन से उसने ठान लिया कि वह अपने डर को हराएगा और अपने सपने को साकार करेगा। अब वह खेल-कूद छोड़ पढ़ाई में ध्यान देने लगा। उसकी गंभीरता को देख सब हैरान थे।

कई सालों तक वीर ने बिना रुके कड़ी मेहनत की। उसने हर मुश्किल को सूझ-बूझ और धैर्य से पार किया। आखिरकार वह दिन आया जब वीर को सेना में एक बड़े अफसर के पद पर चुना गया। यह उसकी मेहनत और जुनून का नतीजा था।

गांव लौटकर वीर ने सबसे पहले अपनी माँ के पैर छुए। माँ की आंखों में गर्व के आंसू थे। पिता ने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा, "आज मेरा बेटा सच में 'वीर' बन गया है। वीर ने साबित कर दिया कि सच्ची चाह और मेहनत से हर राह आसान हो जाती है।

इस कहानी से यह संदेश मिलता है कि अगर दिल में सच्ची लगन हो और मेहनत का जज्बा हो, तो कोई भी सपना पूरा किया जा सकता है।

RNI No. : UPHIN/2023/84344 Postal Reg No. : DL (DS)-61/MP/2023-24-25

SURYA

A journey of brilliance completes

SINCE 1973

Surya Roshni has been a beacon of excellence,
illuminating lives with innovation and quality.

Here's to 50+ years of brilliance, and to many more years of lighting up the future together!

LIGHTING | FANS | APPLIANCES | WATER PUMPS | STEEL PIPES | PVC PIPES

I am SURYA | 50 YEARS OF TRUST | DURABLE PRODUCTS | ASSURED QUALITY

SURYA ROSHNI LIMITED | www.surya.co.in | surya surya_roshni surya.roshni surya-roshni

Email: info@surya.in Tel.: +91-11-47108000